वर्ष - 28 अंक 112 जुलाई-सितम्बर, 2010

वर्ष - 28 अंक 112 जुलाई-सितम्बर, 2010

पुलिस विज्ञान

(त्रैमासिक पत्रिका)

जुलाई-सितम्बर, 2010

सलाहकार समिति

प्रसून मुखर्जी

महानिदेशक

शेषपाल वैद

निदेशक (प्रशासन)

संपादक : **दिवाकर शर्मा**

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो

ब्लाक-11, 3 एवं 4 मंजिल

सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड

नई दिल्ली-110003

संपादकीय

पुलिस विज्ञान त्रैमासिक पत्रिका का जुलाई-सितम्बर, 2010 का अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। जैसा कि संपादक मंडल का यह प्रयास रहता है कि पत्रिका में पुलिस, न्यायालयिक विज्ञान व अन्य संबंधित विषयों की प्रामाणिक व प्रासंगिक जानकारी प्रदान की जाए। अतः अपराधों को सुलझाने में पुलिसकर्मियों द्वारा किस प्रकार की कार्य प्रणाली अपनाई जाए, अपराधों से निपटने तथा अपराध होने की संभावनाओं से संबंधित कुछ ओजस्वी विचार तथा प्रैस की भूमिका पर वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों तथा समाज के कुछ प्रबुद्ध वर्ग द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं जो आम पुलिस-कर्मी के साथ सभी वर्ग के लिए उपयोगी होते हैं।

इस अंक में इस बार आप सभी के लिए **न्यायिक सुधारों पर निर्भर है पुलिस की सफलता, मानसिक स्वास्थ्य एवं पुलिस : एक विश्लेषण, सुरक्षा बलों में बढ़ता तनाव : अशगुन की आहट, भौतिकी साक्ष्यों को पॉलिथिन में संजोने का दुरूपयोग, अपराध अनुसंधान एवं निरीक्षण, पारिवारिक हिंसा का बच्चों पर दुष्प्रभाव, नक्सली हिंसा और पुलिस, वर्दी का असली बल, वर्दीधारी का ज़मीर** से संबंधित लेख भी हैं। पत्रिका के सुधी पाठक पत्रिका को और अधिक सूचनाप्रद व उपयोगी बनाने में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान कर सकते हैं। आशा है कि पत्रिका में सम्मिलित सभी लेख पाठकों को उपयोगी लगेंगे और वे अपने विचारों से संपादक मंडल को अवगत कराते रहेंगे। आपके विचारों का सहर्ष स्वागत है।

दिवाकर शर्मा

संपादक

वर्ष - 28 अंक 112 जुलाई-सितम्बर, 2010

अनुक्रम

न्यायिक सुधारों पर निर्भर है पुलिस की सफलता
• *डा. सुरेंद्र कटारिया* 7

मानसिक स्वास्थ्य एवं पुलिस : एक विश्लेषण
• *अजित यादव* 13

सुरक्षा बलों में बढ़ता तनाव : अशगुन की आहट
• *राकेश कुमार सिंह* 19

भौतिकी साक्ष्यों को पॉलिथिन में संजोने का दुरुपयोग
• *डा. साहिब सिंह चाँदना* 29

अपराध अनुसंधान एवं निरीक्षण
• *डा. सी.पी.जैन* 37

पारिवारिक हिंसा का बच्चों पर दुष्प्रभाव
• *विनोद मिश्रा* 44

नक्सली हिंसा और पुलिस
• *कु. दीप्ति श्रीवास्तव* 48

वर्दी का असली बल, वर्दीधारी का ज़मीर *52*
• *डा. मीना शर्मा*

समीक्षा समिति के सदस्य

प्रो. एम. ज़ैड. खान, नई दिल्ली
प्रो. एस.पी.श्रीवास्तव, लखनऊ
श्री एस.वी.एम त्रिपाठी, लखनऊ
प्रो. बलराज चौहान, भोपाल
प्रो. अरुणा भारद्वाज, नई दिल्ली
प्रो. जे.डी. शर्मा, सागर, (म.प्र.)
प्रो. स्नेहलता टंडन, नई दिल्ली
डा. दीप्ति श्रीवास्तव, भोपाल
प्रो. वी.के. कपूर, जम्मू
डा. शैलेंद्र कुमार चतुर्वेदी, मेरठ
डा. अरविंद तिवारी, मुंबई
डा. उपनीत लल्ली, चंडीगढ़
श्री एस.पी. सिंह पुंडीर, लखनऊ
श्री पी. डी. वर्मा, छत्तीसगढ़
श्री वी.वी.सरदाना, फरीदाबाद
श्री सुनील कुमार गुप्ता, नई दिल्ली

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं। इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

कवर डिजायन : राहुल कुमार

अक्षरांकन एवं पृष्ठ सज्जा : रचना इंटरप्राइजिज, वी-8, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

न्यायिक सुधारों पर निर्भर है पुलिस की सफलता

डा. सुरेन्द्र कटारिया

व्याख्याता (लोक प्रशासन)

81/91, नीलगिरी मार्ग मानसरोवर, जयपुर-20 राज.

आधुनिक प्रजातांत्रिक तथा कल्याणकारी राज्यों में शासन के तीनों अंगों यथा—विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के मध्य शक्तियों का इस प्रकार पृथक्करण किया गया है कि कोई भी एक अंग सरकारी व्यवस्था पर न तो हावी होने पाए और न ही पूर्णतया शक्तिविहीन रहे। कानून-व्यवस्था के संधारण के लिए उतरदायी बनाया गया पुलिस तंत्र मूलतः कार्यपालिका के अधीन कार्यरत है लेकिन पुलिस के आधे कार्य ऐसे हैं जो प्रत्यक्षतः न्यायपालिका के साथ सह संबद्ध हैं। दोहरे निर्देशन तथा पर्यवेक्षण की दुविधा से घिरी भारतीय पुलिस के कार्यों और प्रभावशीलता को अल्प प्रभावी, यह कह कर माना जाता रहा है कि बहुत कम प्रकरणों में पुलिस अपराधियों को सजा दिलवा पाती है। दूसरा यह कि विविध कानूनी, जटिल और शिथिल प्रक्रियाओं के चलते बरसों तक मुकदमों का निस्तारण नहीं हो पाता है। ऐसे में आम जन का 'विधि के शासन' एवं पुलिस अन्वेषण तंत्र पर विश्वास उठता है।

शिथिल न्यायिक प्रक्रिया

भारतीय न्यायिक प्रणाली की शिथिलता नितांत शोचनीय बनी हुई है। भारतीय अधीनस्थ न्यायालयों में किसी मुकदमें को निस्तारित होने में औसतन 15 वर्ष लगते हैं। मार्च, 2009 में देश भर की सभी अदालतों में 3.12 करोड़ मुकदमें लम्बित थे, जिनमें 1.88 करोड़ फौजदारी प्रकरण थे। कुल लम्बित मुकदमों में 2.71 करोड़ अधीनस्थ (निचली) अदालतों में, 40.17 लाख उच्च न्यायालयों में तथा 52, 592 मामले सर्वोच्च न्यायालय में लम्बित हैं।

भारतीय न्यायिक प्रक्रिया में सुधारों हेतु फरवरी, 2008 में आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन में बोलते हुए **राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवी सिंह पाटील** ने कहा था, "आम आदमी न्याय का दरवाजा खटखटाता है किन्तु फैसला होने में पीड़ादायक विलम्ब उसे बदलें में एक निराशाजनक अनुभव दे जाता है। यह भविष्य के लिए शुभ संकेत नहीं है। हम ऐसी किसी स्थिति के आ जाने की अनुमति नहीं दे सकते हैं जब लोग कानून हाथ में लेकर भीड़तंत्र के समान आरोपी से मारपीट करने की संस्कृति अपनाने पर मजबूर हो जाए।" राष्ट्र के सर्वोच्च पद से दिया गया यह वक्तव्य निश्चय ही यह संकेत कर रहा है कि न्यायपालिका के संदर्भ में आम व्यक्ति के मन में कितनी कुण्ठा तथा अविश्वास व्याप्त है और अवसर आने पर हालात कितने विकट हो सकते हैं। इसी प्रकार का वक्तव्य सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश **आर. वी. रवीन्द्रन** द्वारा भी दिया गया है। अक्टूबर 2009 में नई दिल्ली में एक मध्यस्थता केंद्र का शुभारंभ करते हुए उन्होंने कहा था, "कोई व्यक्ति अदालत में मुकदमा क्यों दायर करे, जबकि 30 वर्ष के बाद भी इसका नतीजा सामने नहीं आ सके। ऐसी स्थिति में **पीड़ित मामले का जल्द निपटारा करने हेतु लोग गुण्डों की शरण लेते हैं।"** स्वतंत्र देश के नागरिक यदि यह कहते हुए न्याय प्रणाली की हंसी उड़ाए कि "दादा के जमाने में दायर मुकदमे का यदि पोते के जवान होने तक फैसला हो जाए तो गनीमत समझिए" नितांत शर्मनाक है। सी.बी.आई के भ्रष्टाचार संबंधी 8200 मुकदमे अभी भी लम्बित हैं। इनमें 2276 मामले दस वर्ष पुराने तथा 244 मामले तो 20 वर्ष पुराने हैं। यह स्थिति देश की सर्वोच्च एवं सशक्त जांच एजेन्सी की है।

पूर्व केंद्रीय **विधि मंत्री शांति भूषण** के अनुसार सम्पत्ति विवाद का एक मुकदमा जो सन् 1950 में ट्रायल कोर्ट में दाखिल किया गया था वह 45 वर्ष पश्चात् सन् 1995 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निस्तारित हुआ था। मुकदमों के देर तक लम्बित रहने का परिणाम यह है कि देश भर की जेलों में लगभग 2.5 लाख कैदी अपराध सिद्ध हुए बिना ही बंद हैं।

न्यायालयों में लम्बित मुकदमों की स्थिति (लाखों में)

	उच्च न्यायालय		अधीनस्थ न्यायालय	
वर्ष	निपटाए गए	लम्बित रहे	निपटाए गए	लम्बित रहे
प्रकरण	प्रकरण	प्रकरण	प्रकरण	
2002	11.87	30.87	135.20	224.40
2003	13.50	31.23	139.97	232.50
2004	12.39	34.24	145.85	246.67
2005	13.38	35.21	163.10	256.54
2006	14.51	38.55	159.95	250.80
2007	15.05	37.43	147.98	253.33
2008	15.17	38.74	154.33	264.09

प्रमुख राज्यों में लम्बित मुकदमे (लाखों में)
(31 मार्च, 2009 की स्थिति)

क्र.सं.	राज्यों के नाम	लम्बित मुकदमे
1.	उत्तर प्रदेश	61.72
2.	महाराष्ट्र	44.73
3.	पं. बंगाल	27.68
4.	गुजरात	23.42
5.	राजस्थान	15.70
6.	बिहार	15.67
7.	मध्य प्रदेश	12.60
8.	कर्नाटक	12.14
9.	दिल्ली	10.12
10.	पंजाब	6.32
11.	हरियाणा	5.89

जहां तक आपराधिक मामलों में अभियोजन के मुकाबले सजा की दर का प्रश्न है वह सन् 2005 में मात्र 42.4 प्रतिशत थी जो सन् 1961 में 64.8 रह चुकी है। भ्रष्टाचार के मामलों में तो यह दर मात्र 6 प्रतिशत ही है।

बाधाएं अनेक

भारतीय न्यायिक तंत्र में जिधर हाथ रखो उधर ही कराहने की आवाज सुनाई देती है। समस्या यह है कि न्यायिक विशेषाधिकारों के नाम पर न्यायालयों की कितनी ही कमियां तथा कमजोरियां जनता एवं सरकार के सामने नहीं आ पाती हैं। परिणामस्वरूप उनका यथोचित एवं समयानुकूल समाधान भी नहीं हो पाता है। देश भर में जिस गति से नए कानून एवं तद्नुसार विशेष अदालतें गठित होती हैं उस अनुपात में न्यायाधीशों के पद सृजित नहीं हो रहे हैं। वैसे भी जिस गति से जनसंख्या, अपराधों तथा जनजागृति के स्तर में वृद्धि हो रही है, उसके अनुरूप न्यायाधीश के पद स्वीकृत नहीं हैं। देश में सन् 2009 में उच्च न्यायालयों में 1547 तथा अधीनस्थ अदालतों में 23207 न्यायाधीशों की आवश्यकता थी। स्थिति यह थी कि सर्वोच्च न्यायालय में 7 पद (28 प्रतिशत), राज्यों के उच्च न्यायालयों में 234 पद तथा अधीनस्थ न्यायालयों में 18 प्रतिशत पद (2783) खाली थे। निचले न्यायालयों में 16946 न्यायाधीशों के पद स्वीकृत हैं। वैसे भी भारत में प्रति दस लाख की जनसंख्या पर मात्र 13 न्यायाधीश उपलब्ध हैं जबकि बहुत से विकासशील देशों में यही आंकड़ा 135 का है। अमेरिका में प्रति 10 हजार जनसंख्या पर एक जज उपलब्ध है। भारत में सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जी. एन. पी) का मात्र .2 प्रतिशत हिस्सा न्यायपालिका पर व्यय होता है जबकि इंग्लैंड में 4.3 प्रतिशत, अमेरिका में 1.4 प्रतिशत तथा सिंगापुर में 1.2 प्रतिशत व्यय किया जाता है।

सुविधाओं एवं दुविधाओं में भरे भारतीय समाज, राजनीति तथा प्रशासनिक तंत्र की कहानी भी अजीब है। आज भी अंग्रेजों के जमाने से चली आ रही छुट्टियां

लोक प्रशासन तथा न्यायापालिका में प्रभावी हैं। **शेट्टी आयोग** ने न्यायाधीशों के वेतन-भत्तों में सुधार एवं वृद्धि के साथ-साथ यह भी अनुशंसा की थी कि न्यायालयों में अवकाशों की संख्या कम की जाए। दूसरी ओर नौकरशाही की कार्यप्रणाली ऐसी है कि वह आमजन तथा स्वयं के कार्मिकों में अंसतोष तथा पीड़ा प्रदान करती है जिसके परिणामस्वरूप सरकार के विरुद्ध बहुतायत में मुकदमे दर्ज होते हैं। राजस्थान उच्च न्यायालय में सन् 2009 में लम्बित 1.60 लाख मुकदमों में 97 हजार मुकदमें अर्थात् 60 प्रतिशत प्रकरण सरकारी विभागों से संबंधित थे। राजस्थान सरकार के एडवोकेट जनरल द्वारा बनाई गई इस सूची में उन 19 विभागों का चिन्हीकरण किया गया है जिनके विरुद्ध या जिनके द्वारा मुकदमे सर्वाधिक दर्ज हुए हैं। इनमें सर्वाधिक प्रकरण करों (टैक्स) से संबंधित हैं अर्थात वित्त या कर विभाग के विरुद्ध मुकदमें अधिक हैं। इसके पश्चात् गृह (पुलिस), उद्योग, खान एवं पेट्रोलियम, वन जलदाय, शिक्षा, पंचायती राज, परिवहन तथा राजस्व (भू) सम्मिलित हैं। सरकारी कार्मिकों द्वारा दायर मुकदमों में पेंशन नहीं मिलना, गलत स्थानान्तरण तथा नियुक्ति में अनियमितता के प्रकरण अधिक हैं तथा अधिसंख्य मामलों में अनुपयुक्त तथा अपारदर्शी कानून या नीतियां उत्तरदायी मानी जाती रही हैं। सरकार के विभागों के मध्य भी समन्वय तथा समझ का पर्याप्त अभाव है। सन् 1994 में विधि मंत्रियों तथा विधि सचिवों के राष्ट्रीय सम्मेलन में यह सहमति हुई थी कि सरकार एवं लोक उपक्रमों या परस्पर लोक उपक्रमों के मध्य उत्पन्न होने वाले प्रकरणों को न्यायालयों पर अधिकरणों के बजाय आपसी वार्ता के माध्यम से निपटाया जाएगा किन्तु इस राष्ट्रीय सहमति की भी वास्तविक क्रियान्विति नहीं हो पाई।

देश भर की अदालतों में "एडजोमिण्ट" की विषम समस्या विद्यमान है। कभी वादी-प्रतिवादी तो कभी वकील स्थगन को वरीयता देते हैं तथा मुकदमे पर तारीख-दर-तारीख अंकित होती रहती है। जहां तक न्यायपालिका में भ्रष्टाचार का प्रश्न है, उसे कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता है। हां, इस पर खुल कर बोलने में भय सताता है। यही कारण है कि अप्रैल, 1949 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश शिव प्रसाद को सर्वोच्च न्यायालय की अनुशंसा पर बर्खास्त करने के पश्चात् एक भी न्यायाधीश दण्डित नहीं हुआ है। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि देश की न्यायपालिका **ईमानदार तथा पारदर्शी है।** वर्ष 2009 में जब न्यायाधीशों की सम्पत्ति का ब्यौरा सार्वजनिक करने की बहस चली तब भी बहुत से न्यायाधीशों ने विरोध प्रकट किया था। **सूचना का अधिकार, 2005** के प्रवर्तन के पश्चात् देश भर में चहुं ओर पारदर्शिता एवं जवाबदेयता की मांग बढ़ी है। ऐसे में न्यायाधीशों को भी स्वप्रेरणा से ही सार्वजनिक हित में उन तथ्यों का प्रकटीकरण करना चाहिए जिन्हें एक आदमी जानना चाहता है। चूंकि न्यायाधीश सरकारी कोष से वेतन प्राप्त करते हैं अतः उन्हें देश की समस्त लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का पालन करना चाहिए।

समाधान

भारत के सभी प्रकार के न्यायालयों में लगे मुकदमों के अम्बार को तत्काल कम किया जाना आवश्यक है क्योंकि मुकदमे निस्तारण की दीर्घ प्रक्रिया के चलते लोगों में व्यवस्था के प्रति अविश्वास तथा कुंठा पनप चुकी है। **विलियम ग्लेडस्टोन** के अनुसार, "न्याय में देरी, न्याय नहीं मिलने के समान है।"

सन् 2009 में केंद्रीय विधि एवं न्याय मंत्रालय द्वारा न्यायिक तंत्र तथा मुकदमों के संदर्भ में एक **"मिशन डॉक्यूमेंट"** निर्मित किया गया था जिसमें यह लक्ष्य रखा गया कि सन् 2012 तक मुकदमों के निस्तारण की औसत अवधि एक वर्ष तक लाई जानी है। इस हेतु 5000 अतिरिक्त न्यायालयों में सेवानिवृति न्यायाधीशों की सेवाएं ली जानी प्रस्तावित थी। इस हेतु सुबह, शाम

तथा रात्रि में भी अतिरिक्त अदालत लगाने का सुझाव है। न्यायालिक तंत्र का बोझ कम करने हेतु प्रायः निम्नांकित सुझाव दिए जाते रहे हैं—

1. न्यायमूर्ति डा. ए.आर. लक्ष्मणन की अध्यक्षता में कार्यरत 18वें विधि आयोग की 229 वीं रिपोर्ट (अगस्त, 2009) में यह सुझाव दिया गया है कि सर्वोच्च न्यायालय का विकेंद्रीकरण करते हुए चारों मेट्रों शहरों मे इसकी क्षेत्रीय शाखाएं स्थापित की जाएं। इससे पूर्व सर्वोच्च न्यायालय को दो आन्तरिक भागों अर्थात् संवैधानिक संभाग तथा विधिक संभाग में बांट दिया जाए। विधिक संभाग सामान्य न्यायालयों की सर्वोच्च अपीलीय अदालत हो तथा चारों महानगरों में इसकी शाखाएं स्थापित हों ताकि देश के दूर-दराज के भागों से लोगों को न्याय पाने हेतु दिल्ली नहीं आना पड़े। संविधान का **अनुच्छेद-130** इस प्रकार के प्रावधानों से युक्त है।

2. भारत में विभिन्न प्रकार के विशिष्ट प्रकरणों यथा—भ्रष्टाचार, उपभोक्ता, बाल अपचार, महिलाओं पर हिंसा, वैवाहिक विवाद, किराए संबंधी प्रकरण, चैक अनादरण इत्यादि हेतु पृथक से विशेष न्यायालयों का प्रावधान है। साथ ही कार्मिक तंत्र, श्रम विवाद, दुर्घटना, करारोपण इत्यादि हेतु न्यायाधिकरण भी हैं। ऐसे विशेष न्यायालयों की या तो संख्या पर्याप्त नहीं है अथवा इनमें पूर्णकालिक एवं पर्याप्त न्यायाधीश नहीं होने से कार्यप्रणाली प्रभावित होती है। अतः ऐसी अदालतों को संसाधनों से सुसज्जित कर प्रभावी बनाया जाए ताकि शीघ्र न्याय सुनिश्चित हो सके।

3. ग्राम न्यायालय अधिनियम, 2008 का प्रवर्तन 2 अक्टूबर, 2009 से हो चुका है। इस अधिनियम के अन्तर्गत 5000 से अधिक ग्राम न्यायालय देश में बनाए जाने हैं ताकि ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिकों को उनके घर के समीप सस्ता तथा सुलभ न्याय मिल सके। न्यायधिकारियों के नियंत्रण में बनने वाले इन न्यायालयों की स्थापना में राज्य सरकारों को रुचि प्रदर्शित करनी अपेक्षित है। केंद्र सरकार द्वारा इस हेतु रु.1400 करोड़ की राशि स्वीकृत की गई है। चलित न्यायालय के रूप में गठित होने वाले ये न्यायालय "टली बार्गेनिंग" प्रणाली भी अपना सकेंगे। इन न्यायालयों को स्थानान्तरित किए जाने वाले मुकदमों का निर्णय समय रहते किया जाना आवश्यक है।

4. समस्त प्रकार के न्यायालयों में जहां भी न्यायधीशों की संख्या कम है या पद रिक्त हैं वहां सेवानिवृत न्यायधीशों को नियुक्त कर देना चाहिए। इससे भर्ती प्रक्रिया तथा पश्चातवर्ती परेशानियों से मुक्ति मिल सकेगी। विधि विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में सीटें बढ़ा कर प्रशिक्षित एवं प्रतिबद्ध अधिवक्ताओं की टीम भी निर्मित की जानी चाहिए। विधि शिक्षा की वर्तमान प्रणाली को पेशेवर रूप में ढ़ाला जाना अत्यावश्यक है। जब तक विदेशी वकीलों को भारत में प्रेक्टिस की छूट नहीं दी जाएगी जब तक भारतीय वकीलों में पेशेवर क्षमता एवं मनोवृत्ति विकसित नहीं होगी। अभी भारतीय वकील पूर्णतया पेशेवर मनोवृत्ति को विकसित नहीं कर पाए हैं। बिना बाहरी दबाव एवं परिवर्तित हालात के उनकी मानसकिता में बदलाव संभव नहीं है। झूठी गवाही देने, गवाहों के बयान बदलने तथा झूठे मुकदमों पर नियंत्रण हेतु कठोर कानून बनाना चाहिए।

5. कानूनी सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा-19 के अन्तर्गत गठित **लोक अदालतों** के प्रयोग को विस्तारित किया जाना आवश्यक है। दीवानी प्रकरणों में इन अदालतों की भूमिका प्रभावी रही है क्योंकि यह एक ऐसा मंच है जहां लम्बित मुकदमों को या अदालत में जाने से पूर्व विवादों को सद्भावनापूर्ण ढंग से निपटाया जाता है। वैवाहिक, पारिवारिक, भूमि अधिग्रहण, श्रम विवाद, कामगारों का मुआवजा, बैंक वसूली, पेंशन, मलिन बस्ती, आवासन बोर्ड, गृह ऋण मामले, उपभोक्ता, बिजली, टेलीफोन, तथा गृह कर इत्यादि प्रकरण इन अदालतों को अनिवार्यतः दे देने चाहिएं। लोक प्रशासन से संबंधित अधिसंख्य मामले लोक अदालतें निपटा सकती

हैं। अतः इन अदालतों का दायरा विस्तृत किया जाना चाहिए।

6. भारत में अभी विवाचन (आर्बीट्रेशन) अर्थात् सौदेबाजी की प्रणाली पूर्णतया विकसित नहीं है। यदि हम प्रशिक्षित आर्बीट्रटर तैयार करें तो रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे तथा मुकदमों की संख्या भी घटेगी। इसी तरह "पैरा लीगल क्लिनिक" या कानूनी परामर्श सेवाएं भी विस्तारित की जानी चाहिएं। न्यायालयों में **मुकदमा पूर्व प्रकोष्ठ** (प्री लिटिगेशन सैल) भी गठित किया जाना चाहिए ताकि मुकदमा दायर करने से पूर्व व्यक्ति को एक बार पुनः सोचने तथा समझने का अवसर मिल सके। ऐसे में समझौता केन्द्र (कोन्सिलिशन सेण्टर) भी प्रभावी हो सकते हैं ताकि मिल-बैठ कर मामला सुलझाया जा सकें। ऐसे प्रयासों को अनिवार्य कर देना चाहिए ताकि एक बार पुनः सोचने की बाध्यता हो जाए। प्री-कोर्ट प्रोसिडिंग नामक यह प्रणाली कई देशों में सफलतापूर्वक कार्य कर रही है।

7. एक सुझाव यह भी दिया जाता रहा है कि मुकदमों के अम्बार को घटाने हेतु **अमिवाक् विपणन** अर्थात् प्लीबार्गेनिंग की प्रणाली को अपनाया जाना चाहिए। इस अमेरिकी प्रणाली में आरोपी ट्रायल कोर्ट में प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर अपना अपराध स्वीकार कर लेता है तथा अदालत उसके प्रति नरम रवैया अपनाते हुए सजा में कमी कर सकती है। यद्यपि भारत में यह प्रणाली 5 जुलाई, 2006 से लागू हो चुकी है तथापि इसका प्रचार तथा लोकप्रियता कम ही रही है। इस विधि के क्रियांवयन हेतु दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा-165 तथा अध्याय-21 क में प्रावधान किए गए हैं। इस प्रणाली के अन्तर्गत महिलाओं, 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों, सती प्रकरणों, सफेदपोश अपराधों तथा राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अर्थव्यवस्था से सम्बद्ध मुकदमें सम्मिलित नहीं किए गए हैं। यह प्रणाली दोनों पक्षों में समझौता कराने पर विश्वास करती है तथा इनकी अपील नहीं हो सकती है। वैसे सर्वोच्च न्यायालय प्ली बार्गेनिंग को अवैध तथा अवैधानिक घोषित कर चुका है। लेकिन इसकी व्यावहारिक उपादेयता को देखते हुए मान्यता दी जानी हितकर है।

8. न्यायिक प्रक्रियाओं में सुधार करते हुए **शून्य स्थगन** (जीरो एडजोर्नमेंट) प्रणाली अनिवार्य कर देनी चाहिए ताकि मुकदमों को तारीख पर तारीख नहीं मिले। इण्टरनेट, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग तथा अन्य आधुनिक विधियों को भी मान्यता देते हुए विकसित किया जाना समय की मांग है।

9. सर्वोच्च न्यायालय तथा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के निर्देशों को ध्यान में रखते हुए लम्बे समय से विचाराधीन कैदियों को रिहा कर देना चाहिए। इससे कारागृहों का बोझ भी घटेगा तथा मानवाधिकारों का संरक्षण भी होगा।

10. बरसों से यह सुझाव दिया जाता रहा है कि पुलिस का कानून-व्यवस्था संधारण तथा अभियोजन कार्य पृथक कर देना चाहिए। अदालती मामलों तथा केस छानबीन हेतु पूर्णतया पृथक तंत्र होना चाहिए।

11. यह भी सुझाव विचारणीय है कि बड़े शहरों में पुलिस आयुक्त प्रणाली लागू करनी चाहिए ताकि पुलिस को मजिस्ट्रेट शक्तियां मिल सकें तथा भीड़ नियंत्रण, हथियार लाइसेंस, शांति भंग, अतिक्रमण हटाने तथा यातायात नियंत्रण के कार्य पुलिस त्वरित तथा प्रभावी ढंग से कर सके। दिल्ली, कोलकाता, मुम्बई, चेन्नई, बैंगलुरू, हैदराबाद, अहमदाबाद, नागपुर तथा पुणे में पुलिस आयुक्त प्रणाली प्रभावी सिद्ध हुई है। इसी के साथ कानूनों की संख्या में कमी, उन्हें सरल बनाने तथा प्रभावी बनाने के प्रयास भी किए जाने चाहिएं।

12. देश भर में लगभग 16 हजार पुलिस थाने हैं जो कि लगभग सवा अरब जनसंख्या हेतु कतई पर्याप्त नहीं हैं। दिल्ली में 122 पुलिस थाने हैं जो कि एक करोड़ जनसंख्या के लिए बहुत कम हैं। सन् 2009 में यहां 33

नए पुलिस थाने स्वीकृत हुए हैं। ऐसे ही सभी प्रयास राज्यों में होने चाहिएं। शून्य सहनशीलता नीति को अपनाते हुए पुलिस को प्रभावी बनाना ही होगा।

13. सरकारी विभागों में कार्मिकों की जिम्मेदारी सुनिश्चित करने तथा मुकदमों से बचने के लिए एक **जवाबदेही आयोग** गठित करना चाहिए ताकि यह पता चल सके कि किस कार्मिक की गलती या बदनियती से मुकदमे की स्थिति आई है। नौकरशाही के ढुलमुल रवैये के कारण बनी नरम राज्य छवि से भी मुक्ति पानी होगी।

अब समय आ गया आ कि भारत सरकार तथा राज्य सरकारें तत्काल न्यायिक तंत्र में सुधार करें। देश में शिक्षा प्रणाली तथा पारिवारिक संस्कार भी समयानुकूल बनें तो श्रेष्ठतर रहेगा। **अब्रहाम लिंकन** ने कहा था बुरे लोग तभी जीतते हैं जब अच्छे लोग कुछ नहीं करते हैं।" अतः हमें अन्तर्आत्मा की आवाज पर राष्ट्र हित में सत्य का साथ देना चाहिए। समस्या यह है कि झूठ बिना पैरों वाला होता है अतः उसे बहुत से लोग यत्नपूर्वक सहारा देते हैं जबकि सत्य को स्वयंसिद्ध मान कर षड्यंत्रकारियों के बाजार में हम भटकने को छोड़ देते हैं। इस मूल समस्या को समझ एवं विश्लेषित कर ही हम न्यायिक तंत्र को निष्पक्षता एवं प्रभावशीलता प्रदान कर सकते हैं। निःसंदेह यह मूल्य परिवार में पोषित होने चाहिएं।

सन्दर्भ

1. 229 वीं रिपोर्ट, विधि आयोग (18 वां), विधि एवं न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, अगस्त, 2009

2. एस. के. कटारिया, राईट टू इन्फोरमेशन : लैसन्स एण्ड इम्पलीकेशंस नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2009

3. हरिहर स्वरूप, अम्बार की अदालत, राजस्थान पत्रिका, जयपुर, 23 अगस्त, 2009

4. शंकर प्रसाद तिवारी, भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता में संशोधन कितना जरूरी, प्रतियोगिता दर्पण, आगरा, अक्टूबर, 2009

5. मृगेन्द्र पाण्डे, लम्बित मुकदमों में 60 प्रतिशत सरकारी, दैनिक भास्कर, जयपुर 20 नवम्बर, 2009

❑

मानसिक स्वास्थ्य एवं पुलिस : एक विश्लेषण

अजित यादव (अतिथि प्रवक्ता)

व्यवहारिक मनोविज्ञान विभाग

वी.बी.एस पूर्वांचल, वि. वि. जौनुपर उत्तर प्रदेश

ग्रा. पनकट, पो. महुआरी जि. जौनपुर-222165

दिन ब दिन बदलते हालात में पुलिस का कार्य शारीरिक व मानसिक दोनो रूपों से खतरनाक होता जा रहा हैं, इसका परिणाम हम पुलिस के प्रति लोगों की नकारात्मक अभिवृत्ति, असहयोगात्मक व्यवहार, भ्रष्ट छवि तथा पुलिस पब्लिक संबंधों में अविश्वास के रूप में पहचान सकते हैं। भारत में जहां पुलिस से असंभव की आशा सभी को रहती है। बेहतर पुलिसिंग हेतु आवश्यक प्राथमिक संसाधन भी ठीक से उपलब्ध नहीं है। वही साइबर क्राइम के जमाने में इनके प्रशिक्षण हेतु कोई कारगर प्रशिक्षण कार्यक्रम का भी अभाव है। किसी तरह इन्हे खाकी वर्दी पहनाकर अपराध और जरायम के काले बादल में सेंध लगाने की बात बेमानी लगती है इन बातों को छोड़ भी दें तो एक सामान्य सा मनोविज्ञान है कि किसी भी व्यक्ति से विपरीत परिस्थितियों में परिणाम की अपेक्षा तभी संभव है जब उसे कोई उत्प्रेरक अर्थात (Motive) की प्राप्ति संभव हो, किंतु पुलिस को मिलने वाले वेतन, भत्ते, आवासीय सुविधाएं, अवकाश आदि अन्य सुविधाएं खुद गवाही करते हैं कि पुलिसिंग एक बेहद कठिन कार्य है। लगातार तनावपूर्ण परिस्थितियां, असहयोग, तिरस्कार और अस्वीकार्यता इन कर्मियों में गंभीर मनोवैज्ञानिक समस्याओं को जन्म दे रही हैं पुलिस द्वारा अशोभनीय भाषा तथा व्यवहार, गैरकानूनी कार्यों में संलिप्तता नशा अपने ही साथी या वरिष्ठ की हत्या, आत्महत्या या नौकरी से त्यागपत्र का सीधा संबंध पुलिसकर्मी के बनते-बिगड़ते मनोविज्ञान तथा उसके मानसिक स्वास्थ्य से है।

तनाव का आधुनिक जीवन शैली से सीधा संबंध है पुलिस की भाग-दौड़ व्यस्तता तथा अनियमितता भरी जिंदगी में तनाव एक बेहद जटिल कारक बन गया है। शारीरिक स्वास्थ्य की तरह मानसिक स्वास्थ्य का भी उत्तम रहना बेहतर एवं खुशहाल जीवन के लिए आवश्यक है। विभिन्न शोध परिणामों में यह साबित हो चुका है कि भारतीय पुलिस कल्चर में कमी है पुलिस कर्मियों पर पड़ने वाला व्यावसायिक तनाव, केवल उनकी पारिवारिक व निजी जिंदगी पर असर नहीं डालता बल्कि जनता को भी एक लचर व निम्न स्तरीय सेवा मिलती है। अब प्रश्न उठता है कि मानसिक स्वास्थ्य (Mental Health) से क्या तात्पर्य होता है। स्ट्रेन्ज (strange ,1965) ने "मानसिक स्वास्थ्य को परिभाषित करते हुए कहा है "मानसिक स्वास्थ्य" तात्पर्य वैसे सीखे गए व्यवहार से होता है जो सामाजिक रूप से अनुकूली होता है और जो व्यक्ति को अपनी जिंदगी के साथ पर्याप्त रूप से मुकाबला करने की अनुमति देता है।"

कार्ल मेनिंगर (Karl Menniger) के अनुसार 'मानसिक स्वास्थ्य अधिकतम खुशी तथा प्रभावशीलता के साथ वातावरण एवं प्रत्येक दूसरे व्यक्ति के साथ मानव समायोजन है वह एक संतुलित मनोदशा, सतर्क बुद्धि सामाजिक रूप से मान्य व्यवहार तथा खुश मिजाज बनाए रखने की क्षमता है।" अर्थात

1. मानसिक स्वास्थ्य की मूल कसौटी अर्जित व्यवहार (Leant behaviour) है। इस तरह के व्यवहार का स्वरूप कुछ ऐसा होता है जिससे व्यक्ति को सभी तरह के समायोजन करने में मदद मिलती है।

2. मानसिक स्वास्थ्य एक मनोदशा की अवस्था होती है जिसमे व्यक्ति अपने जिन्दगी के विभिन्न हालातों में सामाजिक रूप से तथा सार्वजनिक रूप से एक मान्य व्यवहार बनाए रखता है।

सामान्य मानसिक स्वास्थ्य के तत्व :

1. सामान्य वर्धन एवं विकास (normal growth and development)

2. अपने प्रति उचित मनोवृत्ति (appropriate attitude towards self)

3. भविष्य की ओर उन्मुखता (orientation towards future) एवं स्वतंत्रता (Autonomy)

4. अधिकतम स्तर तक अपनी क्षमता का उपयोग करना।

5. जिंदगी के प्रति समन्वित दृष्टिकोण (unifying overlook) तथा तनाव के प्रति प्रतिरोध (Resistence)

6. स्वस्थ आत्म-सम्मान (Self esteem)

7. अन्य लोगों के साथ स्नेह एवं विश्वास का भाव कायम करना।

8. तर्क संगत निर्भरता (resonable dependence) तथा आक्रामकता (agrassiveness)

9. समूह की आवश्यकताओं को सम्पन्न करने की क्षमता अच्छा शारीरिक स्वास्थ्य

10. अनुभवों में खुलापन (openness) लचीलापन (Flexibility) समायोजन (Adjustment) बुद्धि (Intelligence)

11. वातावरण का वास्तविक प्रत्यक्षण (realistic perception) आत्म मूल्यांकन (Self evaluatuion)

ऐसा नही है कि मानसिक स्वास्थ्य के बिगड़ने या चिंताजनक होने का विषय सिर्फ पुलिस महकमे की बात है यह सम्पूर्ण समुदाय के लिए बहस का विषय हो सकता है। चुंकि पुलिस को सुरक्षा के साथ विभिन्न कार्य करने होते हैं इसलिए उनके संदर्भ में इस विषय को समझना सामयिक मुद्दा बनता है। पुलिस ही क्यों देश की सेना, पैरामिलिट्री फोर्स में आत्महत्या, नौकरी से त्याग पत्र, स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति जैसे मुद्दे गहराई से विश्लेषण करने पर मनोवैज्ञानिक समस्याओं तथा बिमार मानसिकता के परिणामों की तरफ इशारा करते हैं। सम्पूर्ण समुदाय के कल्याण हेतु जो मानसिक स्वास्थ्य इतना आवश्यक है वही अज्ञानता के अंधेरों में छिपा है। बहुत खेद की बात है कि हमारे देश में मानसिक स्वास्थ्य को इतने नीचे दर्जे की प्राथमिकता दी गई है। आज भी मानसिक रोगों के साथ जुड़ा है वह सामाजिक कलंक (stigma) जिसके कारण लोग इसके बारे में बात करने अथवा सहायता लेने से कतराते हैं। आज जब सामुदायिक विकास के लिए कितना कुछ हो रहा है इस दशा में मानसिक स्वास्थ्य के प्रति यह नकारात्मक और उपेक्षापूर्ण रवैया दृष्टिकोण तकलीफ देह है हमारे इर्द गिर्द एक ऐसा माहौल पनपता जा रहा है जिसमें इंसान खुद से ही दूर होता जा रहा है साथ ही अजनबीपन तथा सन्नाटे को बढ़ावा मिल रहा है। रिश्तों के इस अपरिभाषित दायरे में मानव ही मानव के लिए सर्वनाश का चक्रव्यूह बनाने में व्यस्त है। कुंठा तथा हताशा के चलते तमाम अपराधों में बेतहाशा वृद्धि होती जा रही है। जिसकी जद मे इंसानी उर्जा का ह्रास होने के साथ साथ वह टूटा—थका नजर आ रहा है। मानसिक स्वास्थ्य हमारे व्यक्तित्व का हमारी रोजमर्रा की जिंदगी का अभिन्न अंग है। चिंता दु:ख तनाव जिंदगी का बोझिल बना देते हैं। हम उनसे बचने निपटने के लिए तमाम अच्छे बुरे तरीके अपनाते हैं पंडित-मुल्ला, पीर-पैगम्बर की दुआओं का सहारा लेते हैं, नशीले दवाओं शराब के चंगुल में फँस जाते हैं।

पुलिस कार्य का स्वरूप, पेट्रोलिंग, अन्वेषण, ट्रैफिक, विभिन्न दुर्घटनाओं, अपराध के विभिन्न आयाम, आन्तरिक विघटन जैसे दंगों आदि में निहित है। मैलॉक—पाईन्स एवं काईनन (2007) तथा वार्टस एवं ऊसरी (2007) ने इन स्थितियों में पुलिस की भूमिका की पहचान की है, इन्होंने बताया कि भिन्न-भिन्न स्थानों पर कार्य के स्वरूप एवं स्थिति से तनाव के स्तर का अलग-अलग संबंध है। वास्तव में विशेष कार्य के सम्पादित होने के समय विशेष परिस्थितियों में साथी की मृत्यु या अन्य क्षति उससे संदर्भित अन्य कर्मियों में त्वरित तथा गम्भीर तनाव को

जन्म देती है। सामान्यः हिंसात्मक तथा अनिश्चित दुर्घटना वाली परिस्थितियां कर्मियों में मनोवैज्ञानिक तथा शारीरिक समस्याओं को बढ़ाने के महत्वपूर्ण घटक के रूप में पहचाने गए हैं। गेलर, हॉबफाल 1994, स्टिगलर एवं थावेट 1997 के इसके अतिरिक्त बताया है कि सामयिक परिस्थितियां सांवेगिक अस्थिरता उत्पन्न कर सकती हैं, जैसे किसी निकट संबंधी की असामायिक मृत्यु, आत्महत्या, भीषण दुर्घटना, बच्चों के प्रति आपराधिक एवं लैंगिक दुर्व्यवहार, व्यसनी लोगों द्वारा नशे के प्रभाव में समाज विरोधी कार्य के साथ पुलिस विभाग में उच्च अधिकारियों या वरिष्ठजनों द्वारा असामान्य व्यवहार अक्रामकता एवं रिस्क व्यवहार जैसे एच.आई.वी.संक्रमण आदि भी खतरनाक ढंग से तनाव की मात्रा बढ़ाने में सहायक पाए गए हैं। मनोवैज्ञानिक ऑरपेन (1999) के अनुसार कार्य संबंधी तनाव का प्रभाव पुलिस कर्मियों के जीवन गुणवत्ता (क्वालिटी ऑफ लाईफ) तथा वेल—बीइंग पर नकारात्मक प्रभाव डालता है जिसको उनके कार्य निष्पादन में गिरावट के रूप में प्रत्यक्षीकृत किया जा सकता है। (सीवॉक एवं सीवॉक 2003) ने भारत के क्रिमिनल जस्टिस सिस्टम के तकनीकी जटिलता को कर्मियों में असहायता की स्थिति पैदा करने के कारक के रूप में पहचान की है।

पुलिस छवि का स्वरूप वर्तमान परिवेश में चिंता जनक कारक है। जिसका पुलिस कार्य प्रदर्शन एवं निष्पादन पर प्रभाव पड़ता पाया गया है। (सबरवाल 2002) का मानना है कि जनता मे पुलिस के प्रति सकारात्मक तथा स्वास्थ्य छवि के न होने से पुलिस कार्य प्रणाली पर प्रभाव पड़ता है।

वैश्वीकरण के इस दौर में आज की अनियमितता और तनाव भरी जिंदगी व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रही है। लोग शारीरिक स्वास्थ्य के प्रति सतर्क तो दिखते हैं परंतु मानसिक स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षा की अभिवृत्ति आम है। पुलिस का कार्य तथा पुलिसिंग वर्तमान परिदृश्य के जटिल व्यवस्थाओं में से एक है जिसमे तनावपूर्ण परिस्थितियां लगातार बनी रहती हैं। वे नहीं समझ पाते कि दीर्घकालीन तनावपूर्ण परिस्थितियों में लम्बे समय तक रहने पर उनमें शारीरिक तथा मानसिक रोग जन्म ले रहे हैं। लोगों में अपने मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता का लम्बे समय से अभाव रहा है। एक शारीरिक रोग से ग्रस्त व्यक्ति लक्षणों की पहचान कर सकता है और चिकित्सा कराकर स्वस्थ हो जाता है जब कि दीर्घकालीन तनावपूर्ण परिस्थितियां व्यक्ति में तनाव, कुंठा, निराशा, हताशा, पैदा कर रही है जिससे उसका व्यक्तिगत पारिवारिक, व्यावसायिक व सामाजिक समायोजन बुरी तरह प्रभावित हो रहा है कई बार कुंठा की अभिव्यक्ति इतना भयानक रूप धारण कर लेती है कि उससे मानवता कांप उठती है। तनाव के कारण व्यक्ति चिंतित, चिड़चिड़ा, बेचैन निराश, क्रोधी आक्रामक हो जाता है। पुलिस कर्मियों में इन लक्षणों का आम होना पब्लिक में खराब पुलिस छवि के कारक हो सकते हैं। उसे ठीक से नींद नही आती किसी कार्य में मन नहीं लगता ये लक्षण व्यक्ति पर धीरे-धीरे हावी होने लगते हैं और व्यक्ति इनकी तब तक उपेक्षा करता है जब तक कि ये लक्षण गंभीर रूप न धारण कर ले।

भारत में पुलिस की बदहाली का एक मुख्य कारण पुलिस प्रशासन में राजनीतिक हस्तक्षेप है जो अब नियमित व आम बन चुका है। लेकिन पुलिस की कार्य कुशलता पर इसका असर साफ झलकता है। पुलिस कामकाज में राजनैतिक हस्तक्षेप कई तरह से सामने आता है। पुलिस अक्सर किसी खास केस में खासी दबाव में रहती है इन दबावों का सामना करने के लिए ज्यादातर पुलिस अधिकारी तैयार रहते हैं और कुछ विवश महसूस करते हैं ऐसा न करने पर उनका स्थानान्तरण तय माना जाता है जिसकी वजह से उनके कार्य और मनोबल पर वाकई विपरीत असर पड़ता है।

इन तीव्र दबाव पूर्ण तथा विपरीत परिस्थितियों में पुलिस कर्मी अर्न्तद्वंद्व तथा मतभेद झेलते रहते हैं। इन परिस्थितियों में वे अपनी व्यथा किससे कहें इसलिए वे या तो खामोश रहते हैं या नशे की तरफ अग्रसर होते हैं जिसका सबसे बुरा प्रभाव उनके बच्चों तथा परिवार पर पड़ता है साथ ही विभिन्न समायोजन तथा छवि भी धूमिल होती है। दीर्घकालीन तनाव, कुण्ठा, निराशा, अर्न्तद्वंद्व अनेक मानसिक बीमारियां उत्पन्न करते हैं। जिसमें अल्सर, अस्थामा, डायबिटीज, हृदय संबंधी समस्याएं प्रमुख हैं जब तक कर्मी लक्षणों को समझते तथा स्वीकार करते हैं तब तक ये लक्षण गंभीर हो चुके होते हैं।

इन समस्याओं के निरंतर बढ़ने में हमारी व्यवस्था की खामियां साफ झलकती हैं। पुलिस की आन्तरिक व्यवस्था भी असमान स्तर की है एक वर्ग जिसकी ओर ध्यान नहीं दिया गया है वह है कांस्टेबल स्तर के पुलिसकर्मी का, जो पुलिस संगठन व्यवस्था के सबसे निचले स्तर पर कार्यरत है। देश में कार्यरत 11 लाख 84 हजार नागरिक पुलिस में 88 प्रतिशत कांस्टेबल हैं वे समाज मे राज्यशक्ति का प्रतीक हैं और सरकार व प्रशासन की असफलता को सिपाही कई तरह से प्रभावित करता है। कानून के अन्तर्गत कांस्टेबल की शक्तियां विस्तृत हैं, जैसे किसी भी व्यक्ति को रोकना, तलाशी और शक होने पर गिरफ्तार करना इत्यादि। इन्हीं शक्तियों के अंतर्गत विशेष परिस्थितियों में वह किसी भी व्यक्ति की जान ले सकता है। पुलिस के सिपाही को विभिन्न सरल व कठिन दक्षताओं में माहिर होना पड़ता है उसे परामर्श, तैराकी, हथियारों तथा विस्फोटकों के इस्तेमाल व फायरिंग अपराध नियंत्रण व छापा मारने इत्यादि में पारंगत होना पड़ता है। 1984-2007 के दौरान करीब 19000 पुलिस कर्मियों ने अपनी जान गवाई है सबसे ज्यादा जोखिम के निशाने पर यही निचले दर्जे के कर्मचारी होते हैं। किंतु विडम्बना है कि उन्हीं की सेवाओं की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता।

इतनी ज्यादा जिम्मेदारी का बोझ वहन करने के बावजूद पुलिस कान्स्टेबल उचित वेतन व सम्मान से महरूम है। हांलाकि नए वेतन आयोग ने कांस्टेबल के वेतनमान को थोड़ा बढ़ाया है किंतु अभी उन्हें अर्धकुशल कर्मचारियों की श्रेणी में ही रखा गया है। राष्ट्रीय पुलिस आयोग की पहली रिर्पोट 1979 में कांस्टेबल को कुशल कर्मचारियों की श्रेणी में रखने की सिफारिश की गई थी। अगर ऐसा किया जाता है तो उनकी तनख्वाह और प्रतिष्ठा दोनों में बढ़ोत्तरी हो सकती थी। कांस्टेबल 24 घंटे ड्यूटी पर रहते हैं किंतु फिर भी 14 से 16 घंटे काम करने वाले मे कर्मचारी अपने उच्चाधिकारियों के लिए रोबोट से अधिक मूल्य नहीं रखते। वे अपनी सालाना व साप्ताहिक छुट्टी शायद ही कभी इस्तेमाल कर पाते हैं और अपने परिवार से लगभग कट से जाते हैं। जाहिर है तब 90 प्रतिशत पुलिस बल की सेवा स्थिति इस तरह की हो तो कोई कुशल पुलिस सेवाओं की उम्मीद भी कैसे की जा सकती है।

किसी भी संगठन से 10 प्रतिशत कर्मचारियों के बल पर बेहतर सेवाओं की अपेक्षा करना अव्यवहारिक है। क्योंकि इन कर्मचारियों के उत्कृष्ट कार्यपालन के लिए प्रेरक शक्ति लगभग नगण्य हैं।

जनता की मांग बेहतर सुरक्षा की है जिसे पुलिस के मौजूदा तंत्र को बेहतर बनाकर ही पूरा किया जा सकता है। ऐसे में जन साधारण की सुरक्षा की दृष्टि से पुलिस सुधार बेहद जरूरी हो चुके हैं। प्रश्न ये उठता है कि सुधार आखिर किस तरीके के हो।

नेशनल इन्वेस्टिगेटिंग एंजेंसी की स्थापना, कड़े प्रावधानों के साथ नया आतंक विरोधी कानून स्थानीय एन एस सी केंद्र गुप्तचर व्यवस्था पुख्ता करना, घुसपैठ विरोधी और आतंकवाद रोधी प्रशिक्षण स्कूल और पुलिसबल का आधुनिकीकरण सरकारी योजना के कुछ महत्वपूर्ण अंश माने गए हैं। यह भी ध्यान रखना होगा कि जब तक पुलिस को राजनीतिक दबाव से मुक्त नहीं

किया जाएगा। भविष्य में पुलिस बल गंभीर घटनाओं से भी जूझने में सक्षम नहीं होगी।

यह एक ऐसा ऐतिहासिक तथ्य रहा है कि पुलिस की अवधारणा के साथ ही पुलिस का कार्य लोगों के जानमाल की सुरक्षा अपराध नियंत्रण विभिन्न प्रकार के अन्य विघटनकारी परिस्थितियों को न पनपने देने में रहा है। इन परिस्थितियों में पुलिसकर्मियों को पूरी तरह से मानसिक तथा शारीरिक तौर पर तैयार रहना पड़ता है। जे.ई. अंगोला (2009) रोलिन्सन (2005) द्वारा पुलिसकर्मी के व्यावसायिक तनाव पर किए गए अध्ययन परिणामों से साफ जाहिर होता है कि लगातार तनावपूर्ण परिस्थितियों खतरनाक कार्य अत्याधिक भागदौड़ से पुलिस कर्मियो के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। पुलिस कर्मियों पर देश विदेश में हुए शोध कार्यों के आधार पर यह देखा गया है कि पुलिस में तनाव का मुख्य कारक तीव्र दबावपूर्ण कार्य स्थल पर तैनाती कार्य की तुलना में वेतन तथा सुविधाओं की अनुपलब्धता अत्यधिक अपेक्षा के बीच कम संसाधन में कार्य तथा राजनैतिक हस्तक्षेप मुख्य है। यही स्थितियां लम्बे समय तक बने रहने पर अंर्तद्वंद्व, कुंठा, हताशा का रूप ले लेती है अन्तः इसका परिणाम खराब मानसिक स्वस्थ्य तथा विघटित व्यक्तित्व के रूप में सामने आता है।

कॉक (2006) ने अपने अध्ययन में बताया कि किसी अपराधी या वांछित व्यक्ति के निश्चित गिरफ्तारी या निश्चित कार्रवाई का निर्णय लेने के लिए जब पुलिस को मजबूर होना पड़ता है तो उनमें मानसिक दबाव बनता है ऐसी परिस्थितियों में उनमें कमजोर संगठनात्मक क्षमता तथा कमजोर अन्तःवैयक्ति संबंध हताशा, निराशा तथा अतिरिक्त दबाव पैदा करता है।

खराब मानसिक स्वास्थ्य का सीधा असर व्यक्ति के मनोदशा (Mood) पर पड़ता है। जिससे उसके जीवन के विभिन्न परिस्थितियों पर व्यापक प्रभाव पड़ता पाया गया है। मनोवैज्ञानिकों ने सवेंग (emotion) तथा संज्ञान (cognition) के संबंध के बारे में जानना चाहा है कि क्या संवेगात्मक अनुभूतियों जैसे डर, क्रोध, प्रेम आदि से हमारा चिंतन, प्रत्यक्षण, स्मृति आदि प्रभावित होती हैं। दिन प्रतिदिन की अनुभूतियां तो यह साक्ष्य देती ही हैं कि व्यक्ति का वर्तमान सांवेगिक एवं भावनात्मक स्थिति उसके चिंतन एवं प्रत्यक्षण को प्रभावित करता है। इसेन एवं शल्कर (Isen & Shelker 1982) ने एक अध्ययन किया जिसमें पाया गया कि जब व्यक्तियों में सकारात्मक भाव होते हैं तो वे अस्पष्ट उद्दीपकों (ambiguous stimulus) का प्रत्यक्षण एवं उसका मूल्यांकन अधिक अनुकूल ढंग से करते हैं। परंतु जब उसमें नकारात्मक भाव होते हैं वे इन उद्दीपकों का प्रत्यक्षण मूल्यांकन प्रतिकूल ढ़ंग से करते हैं।

व्यक्ति की भावात्मक मनोदशा का प्रभाव सिर्फ प्रत्यक्षण एवं मूल्यांकन करने की क्षमता पर ही नही बल्कि अन्य पहलूओं जैसे स्मृति (Memory) सर्जनात्मकता (Creativity) तथा जोखिम उठाने वाले व्यवहार (Risk Taking Behaviour) पर भी पड़ता है। पुलिस (Culture) में इन बातों का बड़ा महत्व हो सकता है। मनोदशा उत्तम होती है तो व्यक्ति प्रायः दूसरी घटनाओं या व्यक्तियों के बारे में अच्छी-अच्छी बातों को याद कर सकने में सफल होती है। इस तथ्य का आशय उन व्यवस्थापकों या कार्यपालकों के लिए अधिक है जिन्हें अपने कर्मचारियों का निष्पादन मूल्यांकन करना पड़ता है। जब व्यवस्थापक या कार्यपालक उत्तम मनोदशा में होते हैं तो वे अपने तहत कार्यरत कर्मचारियों के बारे में अधिक सकारात्मक सूचना को याद करने में सफल हो जाते हैं और उनका सकारात्मक रेटिंग करते हैं, खेद की बात है कि पुलिस में आज भी इस विषय पर ज्यादा कार्य नहीं हो पाया है, जिसका सीधा परिणाम उनके मानसिक स्वास्थ्य एवं कार्य निष्पादन पर पड़ता है। उत्तम मनोदशा का प्रभाव सर्जनात्मक समस्या समाधान (Creative problem solv-

ing) पर भी पड़ता है। एस्ट्राडा, इसेन एवं यंग (Estrada isen & young 1995) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बतलाया है कि जब व्यक्ति खुशी की मनोदशा में होता है तो उसमें अच्छे-अच्छे एवं नये विचार काफी आते है, जिससे उनमें सर्जनात्मकता (Creativity) में वृद्धि हो जाती है। सकारात्मक मनोदशा तथा नकारात्मक मनोदश का प्रभाव व्यक्ति द्वारा जोखिम उठाने के व्यवहार पर भी पड़ता है। सामान्यतः यह समझा जाता है कि उत्तम मनोदशा होने पर व्यक्ति जोखिम उठाने का व्यवहार अधिक करेगा परंतु खराब मनोदशा होने पर वह ऐसा व्यवहार कम करेगा। परंतु वास्तविकता इतनी सरल न होकर जटिल है। सचमुच में व्यक्ति की मनोदशा जब उत्तम एवं सुखदायी होती है तो वह ऐसे व्यवहार के बारे में तथा उसमें सम्मिलित संभावित हानियों (Potential Losses) के बारे में अधिक सोचता है जो उत्तम मनोदशा में एक तरह से बाधक होता है। अर्क्स, हेरेन, एवं इसेन (Arkes ,Herren & Isen ,1988) के अनुसार जब व्यक्ति उत्तम मनोदशा में होता है और यह देखता है कि जोखिम उठाने के व्यवहार में संभावित हानि कम है या कम हो सकता है तो वह जोखिम उठाने का व्यवहार अधिक करता है परंतु जब वह यह देखता है कि इस तरह के व्यवहार में उसे संभावित हानि अधिक है या अधिक हो सकता है तो वह जोखिम उठाने का व्यवहार नहीं करेगा। अतः हम यह कह सकते हैं कि खराब मानसिक स्वास्थ्य से उपजे खराब मनोदशा का परिणाम पुलिस पर हाबी होने से कई तरह से प्रभाव डाल रहा है।

आवश्यकता है कि सरकारें पुलिस सुधार की दिशा में सचेष्ट होने के साथ सुधार की प्रक्रिया में तेजी ले आएं तथा मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप को अपनाएं एवं विशेष कार्यक्रमों का आयोजन कर कर्मियों को मनोवैज्ञानिक समस्याओं से निपटने के गुणों को विकसित किया जाए। विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों को विकसित कर मनोबल तथा अन्य कौशलों को सिखाया जाए साथ ही इन समस्याओं के मनोवैज्ञानिक पुर्नवास का रास्ता भी प्रशस्त किया जाए, यह सार्थक पहल होगी।

❑

सुरक्षा बलों में बढ़ता तनाव : अशगुन की आहट

राकेश कुमार सिंह

सी. आर. पी. एफ अकादमी खादर पुर,
गुडगांव, (हरियाणा) पिन-122101

तीव्र प्रतियोगिता, बढ़ी हुई अपेक्षाओं और तनाव बढ़ाने वाले असंख्य अन्य उत्प्रेरकों के इस युग में तनाव जीवन की सच्चाई है। हालांकि तनाव हमेशा से रहा है तथा लिंग, आयु, सामाजिक वर्ग व व्यवसाय का लिहाज किए बिना रहेगा। तथापि, यह अनिवार्य रूप से हानिकारक नहीं हैं, परंतु अधिकांश समय तनाव हमें अरुचिकर परिणामों और शारीरिक स्वास्थ्य तथा मनोवैज्ञानिक तन्दुरूस्ती, दोनों पर गंभीर नकारात्मक प्रभावों की ओर ले जाता है।

तनाव कई फलकों युक्त प्रक्रिया है जो कि हमारे आस-पास की घटनाओं या परिस्थितियों, की प्रतिक्रिया स्वरूप होता है। तनाव किसी भी प्रकार के परिवर्तन की प्रतिक्रिया या जवाब है। यह परिस्थितियों जो रूटीन या सामान्य नहीं है के प्रति आंगिक और भावात्मक अनुक्रिया है जिन्हें नवीन, डरावना, उलझनपूर्ण, उत्तेजक अथवा थकाउ समझा जाता है। तनाव केवल बाह्य कारकों के कारण नहीं होता परंतु यह हमारे अंदर की आशाओं, भय, अपेक्षाओं और विश्वास के कारण भी उत्पन्न होता है। यह मस्तिष्क को संकेत देने का काम करता है कि स्थिति में परिवर्तन के लिए तैयार रहें।

सुरक्षा बलों में तनाव

सुरक्षाबलों के कर्मियों में तनाव व्यापक रूप से फैलता जा रहा है। यह बदलते सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश के साथ-साथ लगातार विपरीत परिस्थितियों में कार्य करते रहने का नतीजा है। सामान्यतः सुरक्षाबल कार्मिकों का तनाव हिंसक गतिविधियों जैसे—आत्महत्या, दुर्व्यवहार या मानव अधिकारों के हनन इत्यादि में परिणत होता है, जो एक चिंता का विषय है। लेकिन 'तनाव' पर बहुत हद तक काबू पाया जा सकता है अगर कार्मिक तनाव पैदा करने वाले कारकों के प्रति सचेत एवं जागरूक रहे तथा अपने व्यवहार में थोड़ा बदलाव लाएं। वर्दीधारी सेवाओं में तनाव अंतर्निहित है। तथापि हाल के वर्षों के दौरान आंतरिक सुरक्षा परिदृश्य और सामाजिक सांस्कृतिक जीवन में बदलाव से निपटने के कारण तनाव का स्तर बहुत बढ़ गया है। हम सुरक्षा बल कर्मियों द्वारा बराबर शूटिंग करने के मामले देखते हैं। अपने वरिष्ठों की हत्या करना, साथियों को बंधक बनाना और आत्महत्याएं करना। यह चिंता और चर्चा का विषय है, विशेषकर इसके प्रेरणार्थक कारणों और उन्हें समाप्त करने के विधि तंत्र के संबंध में।

सामान्य अर्थों में तनाव का आशय व्यक्ति की उस मानसिक स्थिति से है जो उसके कार्य एवं व्यवहार को प्रभावित करता है। तनाव की स्थिति में व्यक्ति सामान्य ढंग से कार्य नहीं कर पाता है। उसके स्वभाव में अप्रत्याशित रूप से आक्रमकता, चिड़चिड़ापन, अधैर्य, हिंसा, विवेकहीनता इत्यादि नकारात्मक तत्व सम्मिलित हो जाता है। एक तनावग्रस्त व्यक्ति परिस्थितियों के अनुसार सही निर्णय लेने में प्रायः अक्षम होता है। तनावग्रस्त कार्मिक ऐसी घटनाएं कर जाता है जिससे सुरक्षा बल संगठनों के मनोबल एवं छवि पर विपरीत असर पड़ता है।

तनावग्रस्त व्यक्ति की पहचान

आप तनावग्रस्त हैं यदि :

- आप ज्यादा चिंता करते हैं
- हर बात पर शिकायत करते हैं
- ज्यादा थकावट या बीमार अनुभव करते हैं

• आप तुनक मिजाजी बनते जा रहे हैं

• आप अपने विचारों को बांटने में बाधा अनुभव करते हैं

• आप नाहक दूसरों की आलोचना करते हैं।

• आपकी नींद, भूख एवं सहवास की इच्छा कम हो गई है।

• आपने अपनी चिंताओं से मुक्ति हेतु मद्यपान/धुम्रपान आरंभ कर दिया है या इसकी मात्रा बढ़ा दी है।

इस पृष्ठ भूमि में, सुरक्षा बलों के कार्मिकों में तनाव पैदा करने वाले कारणों की गहराई के साथ छानबीन करने का प्रयास किया गया है। इस उद्देश्य के लिए केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल (के.रि.पु.बल) को सर्वेक्षण के लिए चुना गया तद्नुसार प्रश्नावलियों के मापांक (Modules) के माध्यम द्वारा तनाव व इसके कारणों को जानने के लिए एक सर्वेक्षण किया गया। कुल 240 लोगो ने, जिनमें 80 राजपत्रित अधिकारी व 160 अराजपत्रित अधिकारियों ने प्रश्नावली का उत्तर दिया।

आंकड़ों का विश्लेषण और व्यवस्था

देश के "शांति रक्षक जैसा कि के.रि.पु.बल को कहा जाता है। अत्यधिक तनावग्रस्त और बेचैन है। राष्ट्र के आरोग्य को बनाए रखने के लिए वे अपना स्वास्थ्य खो रहे हैं तथा देशवासियों के परिवारों की रक्षा के लिए वे अपने परिवारों की अनदेखी कर रहे हैं। क्या आप महसूस करते हो कि आप तनावग्रस्त हैं?" इस प्रश्न के उत्तर में 35% अधिकारियों ने कहा कि वे निश्चित तौर पर तनावग्रस्त हैं, 38% ने बताया कि वे आंशिक तौर पर तनावग्रस्त हैं, जबकि 20% का कहना था कि वे तनावग्रस्त नहीं हैं और 7% ने बताया कि वे इस तथ्य को समझ नहीं पा रहे हैं कि वे तनावग्रस्त हैं अथवा नहीं। अराजपत्रित अधिकारियों के तुलनात्मक आंकड़ें हैं, 58% तनावग्रस्त हैं, 17%आंशिक रूप से तनावग्रस्त हैं, 13% का कथन है कि वे तनावग्रस्त नहीं हैं, जबकि 12% का कहना था कि वे यह नहीं बता सकते कि वे तनावग्रस्त हैं अथवा नहीं। संभवतः यह एक अभूतपूर्व परिणाम है। चूंकि अधिकारियों में 35+38=73% और अन्य रैंकों में 58+17=75% कम से कम आंशिक रूप से तनावग्रस्त हैं और तब भी अपने मिशन को पूरा करने तथा राष्ट्र की अपेक्षाओं पर खरा उतरने के लिए संगठन निर्बाध गति से आगे बढ़ रहा है।

इस प्रश्न पर कि उनको किस कारण होता है। क्या यह तनाव 'पेशे से संबंधित है' अथवा 'परिवार से संबंधित चिंताएं' अथवा दोनों हैं। 59% अधिकारियों और 60% अराजपत्रित अधिकारियों ने बताया कि पेशे से संबंधित व परिवार से संबंधित, दोनों चिंताएं तनाव का मुख्य कारण हैं, 23% अधिकारियों और 19% अराजपत्रित

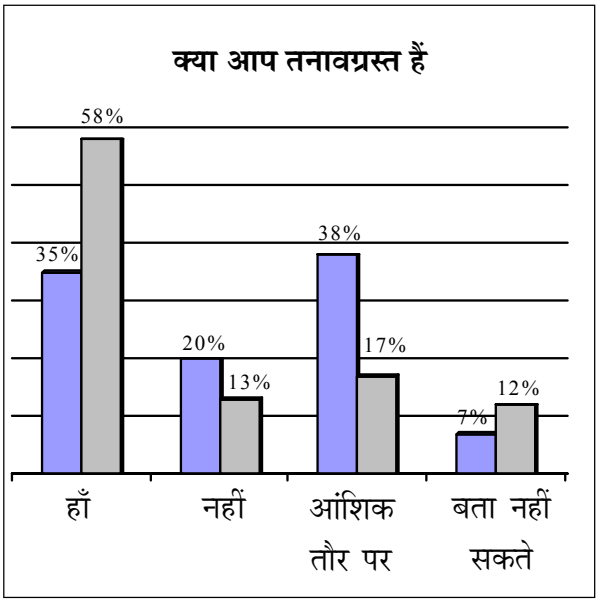

अधिकारियों का मानना था कि चूंकि वे परिवारों से दूर हैं तथा उनका परिवारों के साथ संपर्क जैसे-तैसे होता है, अतः यह सिर्फ परिवार की चिंता है जिसके कारण तनाव होता है। क्योंकि संकट की स्थिति में भी मदद और सहारे के लिए शीघ्र पहुंचना भी मुश्किल है। केवल 6% अधिकारियों एवं अराजपत्रित अधिकारियों ने बताया कि उनकी स्वयं की समस्याएं ही उनके तनावग्रस्त होने का

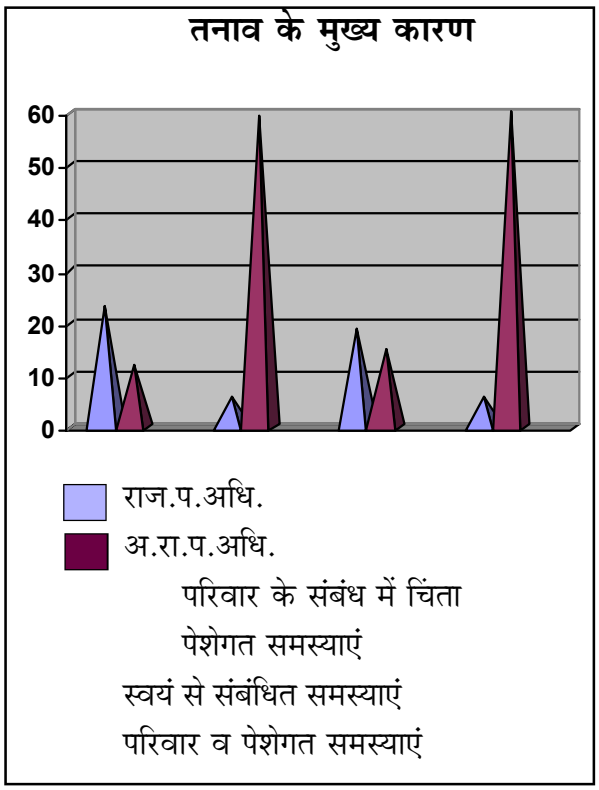

मुख्य कारण है। जिनमें निम्नलिखित हैं:—

1. अत्यधिक/अनिश्चित गतिशीलता और वह भी अत्यल्प सूचना पर।
2. परिवार से अलगाव।
3. कार्य करने का विषम (अनिश्चित) समय।
4. कार्य करने की घटिया स्थितियां।
5. आवास, टेलीफोन, पानी, बिजली इत्यादि जैसी बुनियादी सुविधाओं के लिए भी स्थानीय प्रशासन पर निर्भरता।
6. यूनिटों में अधिकारियों की कमी और इस कारण छुट्टी की योजना बनाने व छुट्टी पर जाने के असमर्थता। स्थानीय प्रशासन को बार-बार अतिरिक्त नफरी उपलब्ध कराने के लिए बल के कार्मिकों की छुट्टी पर रोक लगाना इत्यादि।
7. बच्चों की शिक्षा में बार-बार संचलन/स्थानान्तरणों के कारण बाधा।
8. कार्य करने की लंबी और थकाउ अवधि।
9. प्रतिकूल आबोहवा की स्थितियों वाले कठिन क्षेत्रों में बल की तैनाती।
10. एक से अधिक स्थानों पर घर-गृहस्थी का रख-रखाव करने के कारण वित्तीय संकट।
11. असंवेदनशील और दण्डात्मक नेतृत्व शैली

उत्तर देने वालों से पूछा गया कि आपके पेशे के कौन से लक्षण आपकों ज्यादातर तनाव देते हैं। अर्थात् आपके पेशे का लक्षण/तत्व जो आप में तनाव पैदा करता है अथवा बढ़ाता है। 8% राजपत्रित अधिकारियों और 44% अराजपत्रित अधिकारियों ने बताया कि छुट्टी मिलने संबंधी अनिश्चितता हमारे पेशे की सबसे बड़ी चिंता है। यदि छुट्टी मिलना सुनिश्चित हो तो, बहुत सी समस्याओं, जिनका कि पता लगाया जा सकता है, का समाधान हो जाए। उत्तर देने वाले 15% राजपत्रित अधिकारियों और 21% अरापजत्रित अधिकारियों के अभिमत में रहन-सहन की अमानवीय स्थितियां, पेशेगत तनाव का मुख्य कारण हैं, जबकि 4% राजपत्रित अधिकारियों और 8% अराजपत्रित अधिकारी, बावजूद इस तथ्य के कि वे एक ऐसे संगठन में काम कर रहे हैं, जहां हताहतों की दर अधिक है और साथ ही साथ खतरे का बोध हमेशा चिंताजनक है, जीवन की सुरक्षा के संबंध में चिंतित रहते हैं।

सभी रैंक यह महसूस करते हैं कि वे आमतौर पर सबसे अधिक तनावग्रस्त हैं। तथापि उत्तर देने वालों ने तनाव पैदा करने में कंपनी कमांडर के प्रतिष्ठान को अन्य के मुकाबले सबसे अधिक समस्यात्मक संस्था के रूप में बताया है। स्पष्ट रूप से जमीनी स्तर पर कम्पनी कमांडर को ही पुरस्कार देने अथवा जीवन स्तर में सुधार

कर सकने के किसी अधिकर के बिना सभी आदेशों का पालन करवाना होता है। इस कारण नेतृत्व और कमान संरचना का स्पष्ट दिखाई पड़ने वाला चेहरा कम्पनी कमांडर ही है।

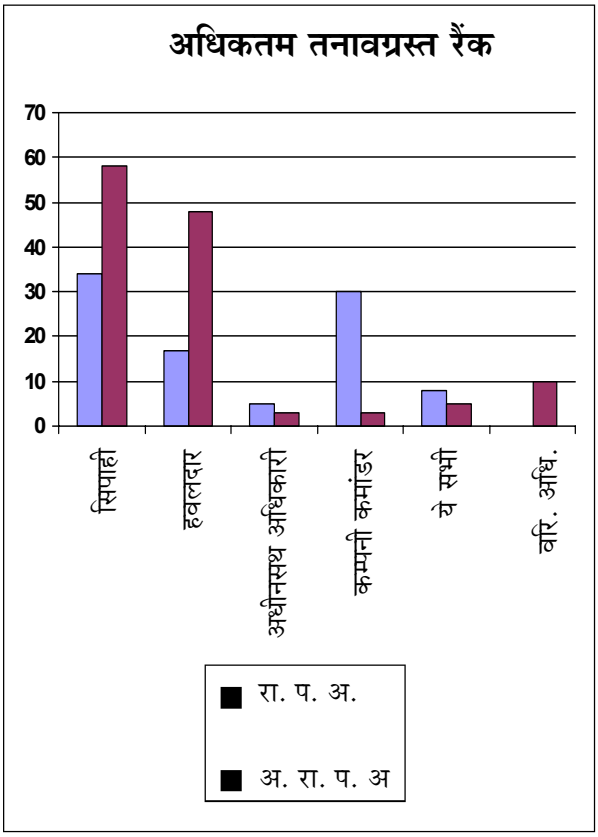

आम धारणा कि अधिकतर परिचालनिक स्थितियां ही हैं जो तनाव के लिए जिम्मेदार हैं, के विपरीत वस्तुतः 41% अधिकारी और 24% अराजपत्रित अधिकारियों का मानना है कि परिचालनिक स्थितियां तनाव के लिए "बिलकुल भी जिम्मेदार नहीं हैं।

अराजपत्रित अधिकारियों और राजपत्रित अधिकारियों के अभिमत में आमतौर पर रहन-सहन की घटिया स्थितियां तथा मूलभूत सुविधाओं की कमी ही तनाव का कारण हैं, और तनाव उत्पन्न करने के लिए पहचाना गया दूसरा कारक है "अनावश्यक बन्दोबस्त"।

कम्पनी स्तर पर, उचित आधारभूत सुविधाओं जैसे,

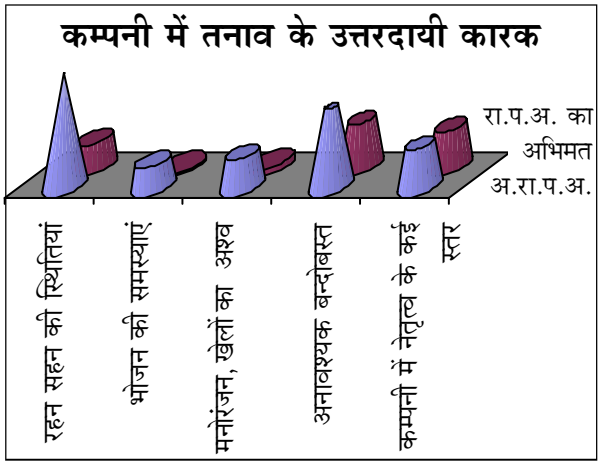

परिवार के साथ संवाद की समस्या, स्थानीय समाजिक जीवन, भण्डार की अनुपलब्धता और चिकित्सा सुविधाओं की कमी के कारण भी तनाव उत्पन्न होता है। इसके अलावा परिवार को साथ रखने की कार्मिकों की इच्छाएं निरन्तर बढ़ रही हैं तथा इस सुविधा की कमी से तनाव बढ़ता जा रहा है।

तनाव के संबंध में नेतृत्व और प्रशासनिक कारण

अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि तनाव वृद्धि के लिए प्रशासनिक कारण ज्यादा जिम्मेदार है। कारण, जो कि प्रेरणार्थक हो सकते हैं, में व्यापक विविधता होती है जैसे पारिवारिक समस्याओं से लेकर बुरे व्यवहार पर उत्तेजना, छुट्टी या कैंप से बाहर जाने की अनुमति न देना, स्पष्ट पक्षपात और उत्पीड़न, अपमानजनक भाषा का प्रयोग इत्यादि।

ये सभी कारण एक अथवा दूसरे प्रकार से प्रशासनिक कारणों से जुड़े हुए हैं, जिनका बहुत व्यापक विस्तार क्षेत्र है। इसमें नेतृत्व, मानव प्रबंधन, प्रशिक्षण व मानवीय सम्मान सम्मिलित हैं। तथापि ऐसी तनावपूर्ण स्थितियां पैदा करने के प्रेरणार्थकों में अपनी भूमिका के लिए मुख्यतः स्थान पाने वाले कारकों का किसी भी रूप में पता लगाना मुश्किल नहीं है परंतु वस्तुतः ये छोटे तथा भली प्रकार ज्ञात सामान्य कारक होते हैं।

तनाव बढ़ाने वाले कारक

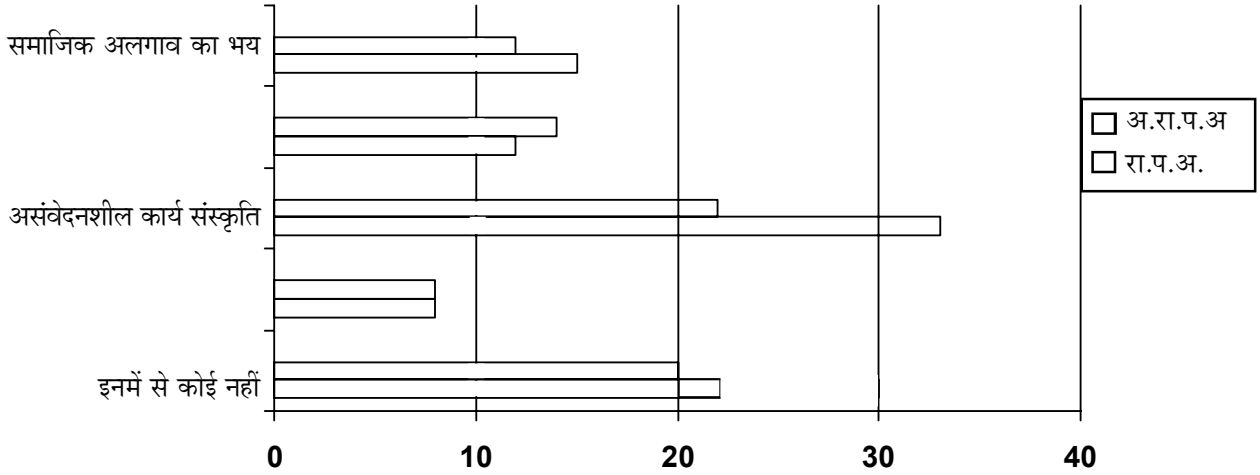

एक अधिकारी या अधीनस्थ अधिकारी से अपेक्षित है कि वह नेतृत्व के गुणों को विकसित करे तथा उसमें नेतृत्व के गुण हों, चूंकि उसे अपनी कमान में आने वाले कर्मचारियों के लिए एक लीडर की भूमिका निभानी होती है। एक अच्छा लीडर केवल वही हो सकता है, जो स्पष्ट रूप से अपनी भूमिका को जानता है। वह दूसरो से जो करवाना चाहता है, उनके सामने स्वयं उसका उदाहरण प्रस्तुत कर सकता हो। संगठन के हित को सर्वोच्च और उसके बाद अपने अधीनस्थों के हितों व सबसे अन्त में अपने हित को रखते हुए एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य कर सकें। अधीनस्थ अधिकारियों व अधिकारी स्तर पर बार-बार प्रशिक्षण प्रदान करके इन गुणों को विकसित करने और साथ ही साथ मानव प्रबंधन की आधुनिक तकनीक गहराई के साथ उनके सामने रखने की जरूरत है, जिसे कि भविष्य में कर्मचारियों के साथ दैनिक जीवन में व्यवहार करते समय आत्मसात् किया जाए ताकि, हर कर्मचारी मानवीय दृष्टिकोण व अन्य पहलुओं को ध्यान में रखते हुए अपनी अधिकतम क्षमता तक निष्पादन करे।

नेतृत्व के कौन से लक्षणों से आपको तनाव होता है

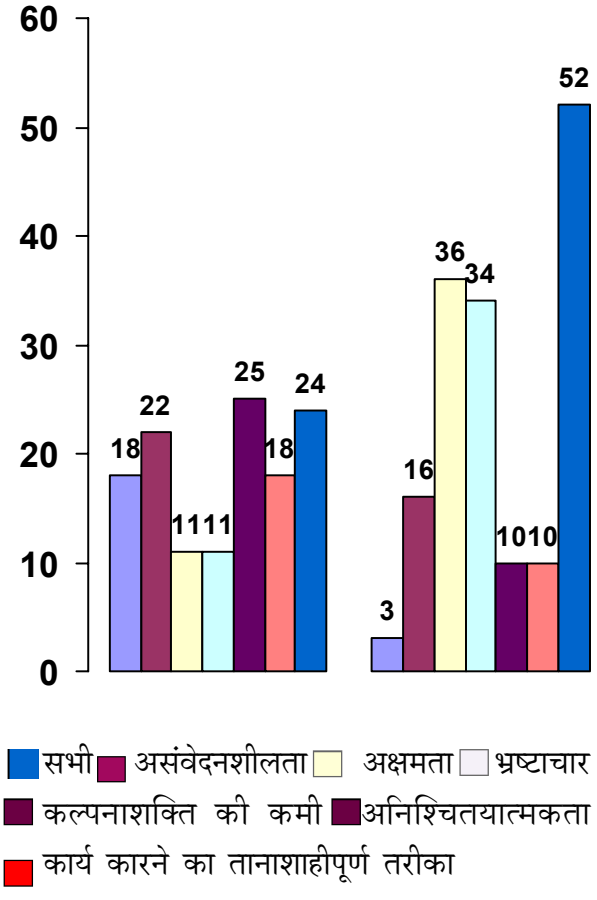

के.रि.पु.बल में तनाव के परिणाम

1. आत्महत्याएं
2. साथियों/अधिकारियों की हत्याएं
3. लोगों के मानवाधिकारों का हनन
4. लोगों के साथ रूखा और पाशविक व्यवहार
5. अत्यधिक मद्यपान करना व धूम्रपान में बढ़ोतरी
6. जीवन से अल्प प्रत्याशा
7. अनुशासनहीनता और अवज्ञा के मामलों में बढ़ोतरी
8. आकस्मिक (accidental) गोली चालन/ गोली काण्ड
9. वाहन दुर्घटनाएं
10. अक्षमता में बढ़ोतरी
11. अवकाश से गैर हाजिर होने के मामलों में बढ़ोतरी
12. डिस्चार्ज और स्वैच्छिक सेवा निवृति के मामलों में बढ़ोतरी
13. पति/पत्नी और परिवार के साथ समस्याओं में बढ़ोतरी।

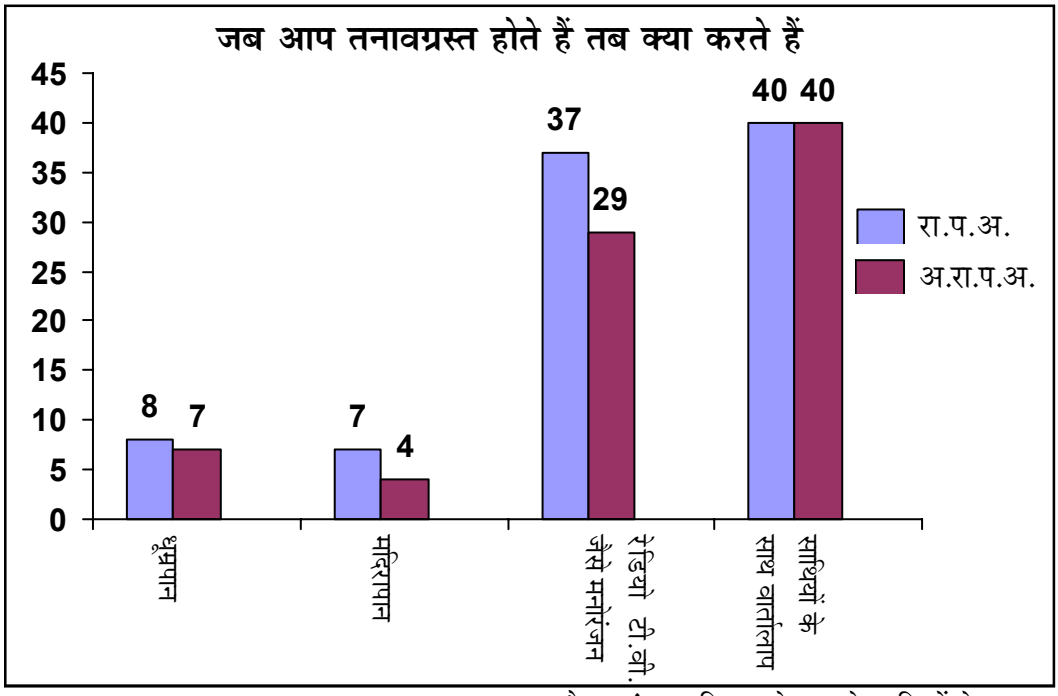

सुरक्षा बलों के कर्मियों पर तनाव के प्रभाव

1. अनुशासनहीनता के मामलों में वृद्धि : सुरक्षा बल के कर्मियों पर निरन्तर तनाव का अति महत्वपूर्ण और प्रत्यक्ष प्रभाव अनुशासनहीनता के मामलों में बढ़ोतरी के रूप में दिखलाई पड़ता है। सतत् तनाव कर्मचारियों को चिड़चिड़ा, बेचैन और असहनशील बना देता है। जिसके कारण कार्यस्थल और सैन्य आवासों/ लाईनों में अनुशासनहीनता में बढ़ोतरी हो रही है। जनता, वरिष्ठों और यहां तक कि उनके अपने साथियों के साथ दुर्व्यवहार के मामलों में बढ़ोतरी हो रही है।

2. मद्य व्यसनिता और मादक द्रव्यों के सेवन में बढ़ोतरी : मद्यपान और मादक द्रव्यों का सेवन तनाव से अस्थाई और क्षणिक राहत प्रदान करना है। तनाव से मुक्ति के अन्य साधनों के आभाव में मद्य व्यसनिता और मादक द्रव्यों की लत के मामलों में बढ़ोतरी हो रही है। यह न केवल कर्मचारियों के स्वास्थ्य बल्कि संगठन के लिए भी हानिकारक है।

3. अवकाश से गैर हाजिरी के मामलों में बढ़ोतरी : सुरक्षा बल कर्मी समय पर छुट्टी नहीं ले पाते हैं अथवा उन्हें बिल्कुल भी छुट्टी नहीं मिल पाती है। इस कारण वे सामाजिक और पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूरा नहीं कर पाते हैं और वे छुट्टी से गैरहाजिर होने के लिए प्रवृत होते हैं। प्रशासनिक कार्य में अनावश्यक बढ़ोतरी करने के अलावा यह अन्य कर्मचारियों की छुट्टी की योजना को भी प्रभावित करता है और इस प्रकार एक ऐसा दोषपूर्ण चक्र उत्पन्न हो जाता है जिसमें अधिक से अधिक लोग फंसते चले जाते हैं।

4. वाहन दुर्घटना सहित बढ़ती दुर्घटनाएं : तनाव के शारीरिक और मानसिक प्रभाव, अनिन्द्रा रोग, बेचैनी, थकान, क्रोध, एकाग्रचित होने पर निर्णय लेने में कठिनाई और अनेक शारीरिक और मानसिक रोगों के रूप में प्रकट होता है। यह कार्मिकों को अधिक गलतियां करने और परिणामस्वरूप दुर्घटनाएं करने के लिए प्रवृत करता है। इस कारण दुर्घटनावश फायरिंग और वाहन दुर्घटनाओं के मामलों में बढ़ोतरी हो रही है।

5. आत्महत्या तथा आत्महत्या की प्रवृति के मामलों में बढ़ोतरी : जब कोई व्यक्ति लम्बी अवधि तक तनाव के प्रभाव में रहता हैं, तब वह सोचना प्रारंभ कर देता है कि उसकी समस्याओं का कोई अन्त नहीं है। इससे, उसके भीतर आत्महत्या कि प्रवृति उत्पन्न होती है। कमजोर इरादे वाले व्यक्ति इस निरन्तर तनाव का सामना नहीं कर पाता है और दुःखों से सदा के लिए छुटकारा पाने के लिए आत्म हत्या कर सकता है।

6. फायरिंग की घटनाएं : आत्महत्या करने जैसा अन्य अतिवादी कदम होता है अपने अधिकारियों अथवा साथियों की हत्या करना। जब स्थितियां किसी व्यक्ति की सहन शक्ति से बाहर हो जाती हैं, तब वह अपने अधिकारियों अथवा साथियों की हत्या करने का सहारा ले सकता है।

7. पति-पत्नी और पारिवारिक समस्याओं में वृद्धि : अनियमित छुट्टी अथवा कोई छुट्टी नहीं और साथ ही कम वेतन, पद्दोन्नति के अपर्याप्त अवसर, उपयुक्त आवास की कमी, बल के कर्मचारियों को अपने सामाजिक और पारिवारिक दायित्वों को निभाने से रोकता है। इस कारण परिवार में कई समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं।

8. घटी हुई कार्यक्षमता और दिए हुए कार्य को पूरा करने में अक्षमता : उपर्युक्त सभी कारकों के सामूहिक प्रभाव के कारण बल की समग्र कार्य कुशलता पर प्रतिकूल प्रभाव होता हैं। चूंकि कर्मचारी अधिकांश समय अपनी ही समस्याओं में उलझे रहते हैं, अतः वे संगठन के लिए अपना श्रेष्ठ प्रर्दशन नहीं कर पाते हैं।

9. डिस्चार्ज और स्वैच्छिक सेवा निवृति के मामलों में बढ़ोतरी : बार-बार संचलन, कम वेतन, पदोन्नत के कम अवसर, पेशे में उन्नति के लिए कोई बदलाव नहीं, अकिंचन प्रतिष्ठा, परिवार से अलग रहना, तथा पेशे से जुड़ा निरन्तर भय और खतरा अधिक से अधिक कर्मचारियों को डिस्चार्ज या स्वैच्छिक निवृति पर जाने के लिए बाध्य कर रहे हैं ताकि वे अपने परिवार के सदस्यों के साथ शान्तिपूर्ण और स्थाई जीवन व्यतीत कर सकें।

तनाव को नियंत्रित करना

- स्वस्थ जीवन शैली विकसित करना
- भोजन और पोषण
- जोखिम भरे व्यवहार को बदलना
- मनोभाव और मनोदशा
- कार्य स्थल पर तनाव घटना

अलग हटकर सोचना

1. अपने क्रोध को सृजनात्मक रूप से और नवीन प्रक्रिया से नियंत्रित करे।
2. क्षमाशीलता को अपनी स्थाई मनोवृति बना ले
3. "धन्यवाद" और "क्षमा करें" बोलने की आदत डालें।

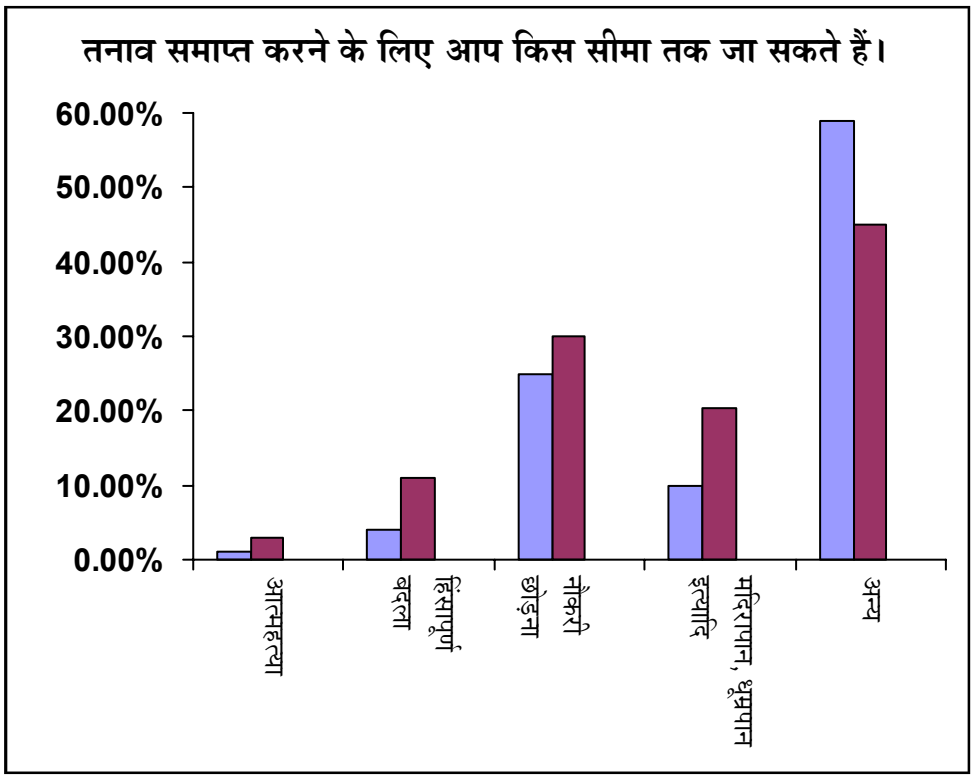

4. "ना" कहना और "ना" को स्वीकार करने की आदत डालें।
5. अपनी तुलना केवल अपने आप से करें।
6. अपने समय का प्रबंधन उसी प्रकार से करें जैसे आप अपने धन का प्रबंधन करते हैं।
7. दूसरों को बदलने से पहले स्वयं को बदलें।
8. तनाव पर विजय पाने के लिए अपने लक्ष्य निर्धारित करें।
9. जीवन में कुछ पराजयों को स्वीकार करें।
10. यदि और सब असफल रहता है तो अपने जीवन में आशाओं एवं उम्मीदों को थोड़ा कम करें।

तनाव पर विजय पाने के साधन

व्यक्तिगत स्तर पर

1. अलगाव से बचें, विभिन्न गतिविधियों में भाग लें : अकेले न रहें। विभिन्न गतिविधियों में भाग लेकर स्वयं को रचनात्मकता के साथ व्यस्त रखें। अगर आप स्वयं को रचनात्मक के साथ व्यस्त नहीं रखोगे तो आपके दिमाग में नकारात्मक विचार आएंगे, जो कि अतिरिक्त तनाव का स्रोत बनेंगे।

2. साथियों, परिवार के सदस्यों और मित्रों के साथ संपर्क रखें : अपनी समस्याओं, मनोभावों, अनुभवों और विचारों को दूसरे के साथ बांटें। अपनी समस्याओं और असफलताओं को दूसरों को बताएं। यह न केवल तनाव से मुक्ति दिलाने के साधन के रूप में कार्य करता है बल्कि दूसरों के अनुभवों से सीखकर समस्या समाधान में सहायता भी करता है।

3. मद्यपान और मादक द्रव्यों से दूर रहें : मद्यपान और मादक द्रव्य क्षणिक तौर पर तनाव मुक्ति दिला सकता है, परंतु इनके निरंतर उपभोग से स्थिति बिगड़ जाएगी। शारीरिक और मानसिक हानि पहुंचाने के अलावा ये वित्तीय हालत को भी बिगाड़ देते हैं। इस प्रकार अंत

में मद्यपान और मादक द्रव्यों का सेवन इलाज के बजाए तनाव का कारण बन जाता है।

4. नियमित व्यायाम और खेलकूद : तनाव मुक्ति के लिए नियमित व्यायाम और खेलकूद सर्वश्रेष्ठ है। नियमित व्यायाम और खेल शरीर को मजबूत और मन को दृढ़ बनाते हैं। व्यायाम से बीमारी दूर भागती है जबकि खेल-कूद मनोरंजन उपलब्ध कराते हैं। खेलों के दौरान तनाव से मुक्ति प्राप्त होती है और अक्सर कार्यालय अथवा ड्यूटी के दौरान के छोटे-मोटे झगड़े, खेल के मैदान में सुलझ जाते हैं।

5. योग ध्यान : योग और ध्यान को प्रयोग तनाव के प्रभावशाली निवारक के रूप में न केवल भारत में वरन् अन्य देशों में भी बढ़ रहा है। परंतु इसे उचित मार्गदर्शन में सीखना और इसका अभ्यास करना चाहिए।

6. संतुलित आहार : शरीर और मन को तंदुरूस्त रखने के लिए संतुलित आहार लेना बहुत जरूरी है। एक बार जब मन और शरीर स्वस्थ हों तो मनुष्य का तनाव से प्रभावित होने की संभावना कम होती है।

7. नियमित रूप से छुट्टी लें और परिवार के सदस्यों के साथ आराम करें : सुरक्षा बल में कार्मिकों को छुट्टी न मिलना एक आत्यधिक तनाव का कारक है। अतः यह बहुत आवश्यक है कि कर्मचारी नियमित रूप से छुट्टी का उपभोग करते हैं। यह सुनिश्चित करना सभी कमांडरों का कर्तव्य है कि उनके जवान छुट्टी पर भेजे जाएं और वह भी यथा संभव समय पर। इससे उनको पेशे के तनाव और परिचालनिक क्षेत्रों के सतत् भय और खतरों से दूर रहकर आराम करने का अवसर प्राप्त होगा चूंकि अधिकांश तैनाती स्थलों पर कर्मचारी अपने परिवार को साथ नहीं रख पाते हैं। इसलिए केवल छुट्टी ही वह समय है जब वे अपने परिवार के साथ बिता सकते हैं तथा अपने पारिवारिक और सामाजिक दायित्वों को निभा सकते हैं।

8. तनाव के कारणों और उनका सामना करने के संबंध में स्वयं शिक्षा : कर्मचारियों को तनाव के कारकों और उनसे मुक्ति के साधनों के प्रति जागरूक करना जरूरी है चूंकि इससे समय पर निवारक उपाय करने में उन्हें सहायता प्राप्त होगी।

9. उग्र मामलों में मनोवैज्ञानिक परामर्श : जो तनाव का सामना नहीं कर पाते हैं, उनके लिए मनोवैज्ञानिक परामर्श देने का प्रावधान होना चाहिए।

10. अलग हटकर सोचें : तनाव नियंत्रण का सबसे अच्छा तरीक है क्रोध और कुंठा पर नियंत्रण करें और रचनात्मक व सकारात्मक सोचें। व्यवस्था को अच्छे कार्यवातावरण में परिवर्तित करने के लिए संगठन को अपना श्रेष्ठ योगदान दें।

संगठन के स्तर

1. संवेदनशील नेतृत्व और कमान : वरिष्ठों को अपने अधीनस्थों की समस्याओं के प्रति संवेदनशील और आदर भाव युक्त होना चाहिए तथा उसकी सहायता करने का प्रयास किए जाने चाहिए। अगर किसी समय प्रशासनिक स्तर पर कर्मचारियों की मदद करना संभव न हो, तब परामर्श दिया जाना चाहिए तथा हमें तनावग्रस्त व्यक्ति के प्रति सहानुभूति रखनी चाहिए।

2. जीविका योजना : कर्मचारियों को सेवा काल के दौरान कोर्स करवा कर जीविका योजना के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए, जो कि उनके सामान्य जीवन में, उनकी दक्षता में सुधार करने और उन्हें हुनर प्रदान करने में उपयोगी हो। उन्हें संगठन में अपनी जीविका योजना के संबंध में परामर्श दिया जाना चाहिए।

3. पदोन्नति के बेहतर अवसर : किसी संगठन में पदोन्नति मुख्य प्रेरक और मनोबल बढ़ाने वाली होती है। पदोन्नति का पुनरीक्षण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि कम-से-कम प्रत्येक को 5 वर्ष में पदोन्नति का अवसर हो।

4. स्थानान्तरण नीति : स्थानान्तरणों की पारदर्शी व्यवस्था करने के लिए स्थानान्तरण नीति को सरल और कारगर बनाना चाहिए। बिना बारी के कोई स्थानान्तरण नहीं होना चाहिए। स्थानान्तरण जरूरत के आधार पर होने चाहिए। इससे अनिश्चितता दूर होगी तथा अपनत्व की भावना सृजित होगी।

5. बेहतर संचलन योजना : भागदौड़ में कोई संचलन नहीं होना चाहिए। कार्मिकों को अपने संचलन की योजना बनाने तथा इसे पूरा करने के लिए उचित समय दिया जाना चाहिए।

6. कोई तदर्थवाद न हो : जहां तक संभव हो प्रशासन में किसी प्रकार का तदर्थवाद नहीं होना चाहिए और "सब चलता है" की मनोवृत्ति से बचना चाहिए।

7. बेहतर आवास : उचित आवास की कमी भी पुलिस के कार्मिकों में तनाव का एक मुख्य कारण है। तैनाती स्थल पर कोई उचित आवास नहीं है। आवास के उचित व्यवस्था से उनकी कई समस्याओं का समाधान हो सकता है।

8. कागजी कार्रवाई में कमी लाएं : अधिकांश समय और प्रयास अवांछित रिपोर्ट और रिटर्न तैयार करने में बरबाद हो जाता है। इन रिपोर्ट/रिटर्न को तैयार करने में बर्बाद होने वाले समय को कुछ उपयोगी कार्यो के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। इससे उपलब्धि की भावना प्राप्त होगी तथा कार्मिकों का मनोबल भी बढ़ेगा।

9. बेहतर मनोरंजन सुविधाएं और उचित आराम : सुरक्षा बल पर काम का भारी बोझ है तथा मनोरंजन की सुविधाओं का अभाव है। दिन में आठ घण्टे काम करने का सिद्धान्त सख्ती के साथ लागू किया जाना चाहिए तथा तनाव से मुक्ति के लिए मनोरंजन की सुविधओं में सुधार किया जाए।

10. परामर्श : कर्मचारियों द्वारा तनाव का सामना करने के संबंध में उन्हें परामर्श देने हेतु, संगठन द्वारा विशेषज्ञ परामर्शदाताओं की सेवाएं नियमित रूप से ली जानी चाहिए। अधिकारियों को परामर्श देने और अन्तर वैयक्तिक दक्षता में प्रशिक्षित किया जा सकता है।

❑

भौतिकी साक्ष्यों को पॉलिथिन में संजोने का दुरुपयोग

डा. साहिब सिंह चाँदना

सहायक निदेशक (सीरम विज्ञान) अपराध विज्ञान प्रयोगशाला
मधुबन (करनाल) हरियाण
61, ग्रीन पार्क, हिसार-125001 (हरियाणा)

प्लास्टिक का आविष्कार न्यूयार्क (अमेरिका) के मुद्रक—"जोहन डब्लयू हायट" ने सन् 1870 में किया, परंतु भारतवर्ष में इसका प्रचलन 1940 से प्रारंभ हुआ और 1970 तक इसका प्रयोग औद्योगिक एवं घरेलू क्षेत्र में देखा गया। प्लास्टिक (Plastic) शब्द का उद्‌गम ग्रीक भाषा के प्लास्टिकोस से रूपांतरित हुआ जिसका अर्थ है—मुड़ने-तुड़ने योग्य। गत तीन दशकों से तो प्लास्टिक से निर्मित वस्तुओं और इनके उपयोग की होड़ सी लग गई। यहां तक कि घरेलू सामान के लिए भी इसका व्यापक स्तर पर प्रयोग होने लगा। पॉलिथिन जो प्लास्टिक से ही निर्मित है इसके प्रयोग के भयावह परिणाम भी सामने आने लगे। यह अन्य पदार्थों की अपेक्षा हल्का-फुल्का, सस्ता, टिकाऊ, जल एवं वायु का प्रतिरोधी, कम स्थान घेरने वाला (सिमटने वाला) कई रंगों में इनका आधुनिक प्रयोग लिफाफे, थैले (Carry Bags) प्लास्टिक शीटस इत्यादि के रूप में हो रहा है। वर्तमान में भारतवर्ष की तुलना में विश्व में प्लास्टिक व इसके रूपों की खपत 15 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति हैं, क्योंकि आंकड़ों के अनुसार भारतवर्ष में प्रति व्यक्ति 1.6 कि.ग्रा. प्रति वर्ष, जापान में 60 कि.ग्रा. और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में 90 कि.ग्रा. है। वर्ल्ड वाच संस्था द्वारा दी गई एक रिपोर्ट के अनुसार गत 50 वर्षों में प्लास्टिक की खपत में आशातीत 100 गुणा वृद्धि हो चुकी है। प्लास्टिक सामग्री अथवा इनके विभिन्न रूपों को तैयार करने के लिए पी.वी.सी. (पोली विनालय क्लोराइड), एच.डी.पी.आई (हाई डेन्सिटी पोली इथियॉन), एल.डी.पी.ई. (लो डेन्सिटी पोली इथिलीन), पी.पी. (पोली प्रोपलीन), पी.यू.एफ. (पोली यूरीथेन फोम), पी.ई.टी. (पोली इथिलीन ट्री पथैलेट) इत्यादि रसायन प्रयुक्त किए जाते हैं।

पॉलिथिन का सही नाम है पोलिईथीन। वैज्ञानिक भाषा में यह पोलिमेरिक पदार्थ कहलाता है। रासायनिक संरचना एवं गुणधर्मी के आधार पर प्लास्टिक व इसके रूप विभिन्न प्रकार के होते हैं। प्लास्टिक थैलियों के प्रचलन से राष्ट्र की सफाई व्यवस्था तो चरमरा ही रही है, परंतु हास्याप्रद विषय यह है कि कुछेक अन्वेषण अधिकारी और यहां तक कि पोस्टमार्टम करने वाले कुछेक चिकित्सक इन प्लास्टिक थैलियों को खून से सने हुए कपड़ों को ढकने व लपेटने में जरा भी नहीं चूकते। अतैव इसके उपयोग की अपेक्षा निंरतर दुरुपयोग हो रहा है। पॉलिथिन थैलियों के प्रचलन में निरंतर वृद्धि से मानव-स्वास्थ्य पर तो प्रतिकूल प्रभाव पड़ता ही है परंतु जब विधि विज्ञान प्रयोगशालाओं में पॉलिथिन में सिमटे हुए कपड़ों और अन्य रक्त रंजित वस्तुओं को विश्लेषण के लिए खोलते हैं तो गला-सड़ा रक्त और बूंदें रिस कर अनायास ही वर्किंग टेबल पर फैलने लगती हैं। ज्ञातव्य है कि 70-80 प्रतिशत खाद्य सामग्री की पैकिंग इन्हीं विभिन्न प्रकार के पोलिमेरिक मैटीरियल में होती हैं। ये पोलिमेरिक पदार्थ व प्लास्टिक इत्यादि स्वास्थ्य के लिए तो हानिकारक हैं ही और नान बायोडिग्रेबल की श्रेणी के पदार्थों से इनकी तुलना की गई है। भले ही इनमें सिमटे हुए खून से सने हुए कपड़े व पदार्थ निःसन्देह सड़ गल जाएं परंतु इनकी संरचना और प्रकृति ज्यों की त्यों बनी रहती हैं।

छिद्रयुक्त लकड़ियों के डिब्बों में भी यदि रक्तरंजित

अथवा रक्त अवयवों को रखने से भी घातक परिणाम देखने को नहीं मिलते, परंतु प्लाईवुड से निर्मित वस्तुओं की पैकिंग से परिणाम परिवर्तित हो सकते हैं। विविध प्रयोगों से यह देखने में आया है कि विभिन्न प्रकार की लकड़ियों में उपलब्ध टैनिक एसिड रक्त के स्थायीत्व को समाप्त नहीं कर पाता। रक्त की सुदृढ़ अथवा क्षीण अभिक्रिया केवल अधिक रन्ध्र वाली लकड़ियों के बलबूते पर ही स्थिर रहती है अन्यथा इनके ऊपर किए जाने वाले रक्त परीक्षण की प्रक्रिया प्रायः सामान्य रहती है। केवल अन्तर इतना है कि अधिक रन्ध्रयुक्त लकड़ियां रक्त को अपने अन्दर सोखने सें सक्षम हैं। रक्त परीक्षण का प्रयोग कीकर, सफेदा, शीशम, टली, और आम की लकड़ियों पर किया जा चुका है।

प्रायः घटनास्थल पर हथियार के रूप में प्रयोग की जाने वाली लकड़ियों, डंडों इत्यादि की भरमार होती है। जब इनको प्रयोगशाला के अन्दर सीरम विज्ञान विभाग में परीक्षण के लिए लाया जाता है तो लम्बे समय के पश्चात परीक्षण करने पर भी रक्त परीक्षण प्रक्रिया में किसी प्रकार की कोई कमी देखने को नहीं मिलती। अतैव लकड़ियों में पाया जाने वाला टैनिक एसिड रक्त प्रक्रिया को प्रभावित नहीं करता। परीक्षण के परिणाम संतोषजनक पाए गए हैं।

विधि विज्ञान में रक्त विश्लेषण की महत्ता को ध्यान में रखते हुए सन् 1910 में कलकत्ता में सीरोलोजिस्ट डिपार्टमेंट खोला गया और उसके प्रभारी को भारत सरकार के "इम्पीरियल सीरोलोजिस्ट" की संज्ञा दी गई। उन्होंने विधि विज्ञान से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारियां उपलब्ध करवाई। इस संस्था का, खून की पहचान, मूलांश व वर्गीकरण इत्यादि विश्लेषण के विषय में महत्वपूर्ण योगदान रहा। भारत की स्वतंत्रता के पश्चात इस विभाग का पुनः नामकरण सीरोलाजिस्ट एंड केमिकल एग्जामीनर टू गर्वनमेंट ऑफ इंडिया के रूप में किया गया।

रक्त के विश्लेषण में भौतिकी, रासायनिक, जैविक, जैव प्रौद्योगिक तकनीक कारगर प्रमाणित हो रही है। इन सभी के लिए रक्त का येन केन प्रकारेण सुरक्षित होना आवश्यक है, ताकि सीरम विज्ञानी रक्त विश्लेषण की व्यवस्था को सुनिश्चित कर सके। अतैव अन्वेषण अधिकारियों को वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों द्वारा और चिकित्सा अधिकारियों को उन सभी चिकित्सकों को दिशा निर्देश देने के लिए बाध्य होना चाहिए कि वे रक्त रंजित वस्तुओं को पॉलिथिन थैलियों में पैक न करके हवादार सूती पुलन्दों या छिद्रयुक्त गत्ते के डिब्बों में पैक करके भेजे अन्यथा विश्लेषण में वांछित जानकारी नहीं मिल पाती। आहत अथवा उत्पीड़ित व्यक्ति को न्याय कहां मिल सकता है, जब खून अथवा रक्तरंजित वस्तएं इन पार्सलों में ही गल सड़ जाएंगी।

धब्बों की पोजीशन और गति को ध्यान में रखते हुए, अपराधी की विशिष्ट रूप से संचालित गतिविधियों की गहन जानकारी मिल सकती है। इसके अतिरिक्त रक्त के जमाव की दर, सूखापन, आद्रता, रक्त के रंग का परिवर्तित होने की जानकारी इत्यादि से रक्त के धब्बों के समय का अनुमान लगाया जा सकता है। रक्त के साथ मिले हुए बाल, संशिल्ट सूत्र, हड्डियों और मांसपेशियों के महीन कणों से भी रक्त किस स्थान से आया है इसकी महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। सीरम विज्ञानी निपुणता से रक्त के विषय में निम्नलिखित तथ्यों को प्रमाणित करता है :

(क) रक्त के धब्बों के आकार और संख्या की विवेचना।

(ख) जिस दिशा से रक्त गिरा हो उस दिशा में लंबे आकार के धब्बे बने मिलेंगे और खून की धार का कालापन उसकी दिशा निर्धारित करेगा।

(ग) गिरे हुए खून की मात्रा का अनुमान।

(घ) गिरे हुए खून की ऊंचाई का अनुमान खून के

धब्बों की आकृति से लगाया जा सकता है।

(1) अनुमानित 50 सेंटीमीटर तक के गिरे हुए रक्त के धब्बे गोलनुमा होने के कारण साथ तीखे किनारों वाले हो सकते हैं।

(2) 60 सेंटीमीटर से 150 सेंटीमीटर तक की ऊंचाई से गिरी रक्त की बूंदो से पहिए के चकते जैसी आकृति उभरती है।

रक्त में विभिन्न प्रकार के प्रोटीन और प्रकिण्व और अन्य पदार्थ पाए जाते हैं और रक्त कणों के ऊपर भी प्रोटीन से संबधित महीन कण होते हैं, जिन्हें प्रतिजन की संज्ञा दी गई है। यदि पॉलिथिन में सिमटी हुई रक्त रंजित वस्तुएं प्रयोगशाला के संग्रहित कक्षों में अत्यंत भीष्ण तापक्रम में दिनोंदिन पड़ी रहती हैं जिस के प्रकिण्व 45 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान पर प्रकिण्व प्रक्रिया के कारण क्षत-विक्षत होकर खंडित हो जाते हैं जिससे रक्त के वर्ग का विश्लेषण तो दूर, रक्त का मूल भी ज्ञातव्य नहीं हो सकता रक्त के तरल अथवा अर्द्धत नमूने अन्वेषण अधिकारी या चिकित्सक दोनों ही ले सकते हैं अतैव उनके बचाव, पहचान और उनको निर्दिष्ट मापदंडों का ध्यान में रखते हुए उनको अग्रेषित करने चाहिए। उन्हें यह नहीं मालूम कि ऐसा करके वे केवल अपराधी की अभूतपूर्व सहायता कर रहे हैं। कुछेक घटनाओं में रक्त विषाक्तता भी देखने को मिली है क्योंकि पॉलिथिन में रखी हुई रक्तरंजित वस्तुओं में रक्त परिवर्तन के साथ-साथ नए-नए विषों का उद्‌गम और युगल व युग्मक्रियाएं होने के साथ-साथ गहन रासायनिक प्रक्रियाओं से नए रसायन उभर आते हैं। ऐसी विषम परिस्थितियों में रक्त विश्लेषण शारीरिक रूप से घातक होने के साथ-साथ विषैले कीटाणुओं से वैज्ञानिक सदस्यों के शरीरों को संक्रमित करने के साथ-साथ उन्हें संकट में डाल सकता है। चाहे फेस-मास्क एपरन और हैंड ग्लब्ज इत्यादि से शरीर के विभिन्न भागों को वैज्ञानिक ढक ले फिर भी इन विषैले कीटाणुओं के संक्रमण से वैज्ञानिकी सदस्यों की टीम अछूती नहीं रह सकती। इसके साथ ही जो पुलिस के कर्मचारी इन पुलन्दों को न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशालाओं में जमा करवाने और न्यायालयों में पुनः वापिस ले जाने के लिए कार्यरत हैं, दुर्गन्धयुक्त रक्त से पनपी बिमारियों के कारण शिथिल हो सकते हैं। नजला-जुकाम, ब्रान्काईटिस, टी.बी., व एड्स इत्यादि उतकों और रक्त के संक्रमण से विकराल रूप धारण होने पर वैज्ञानिक ग्रसित व उत्पीड़ित हो सकते हैं।

रक्त व रक्तरंजित वस्तुओं में विशेष रासायनिक परिवर्तनों के साथ-साथ विषैली गैसें और वाष्प निकलते हैं जो पुलन्दों को खोलते समय दुर्गन्धयुक्त रक्त में दबाव बना कर कई बार फव्वारे के रूप में वैज्ञानिकों के कपड़ों, मेज और दीवारों पर गिर सकते हैं। रासायनिक परिवर्तन के साथ-साथ जैविक परिवर्तन होने से दुर्गन्धयुक्त रक्त में नन्हें-नन्हें कीटों और लारवा (मैगट्स) की भरमार होती है। ऐसी अवस्था में सीरम विज्ञानी वांछित विश्लेषण की अपेक्षाकृत केवल दांतों तले अंगुली दबाने को विवश होता है। यहां तक कि जब अन्वेषण अधिकारी या चिकित्सक के साथ कार्यरत जमादार (सेवादार) इत्यादि मृतक के कपड़ों को बिना सुखाय पॉलिथिन की थैलियों मे डाल देते हैं तो मृतक अथवा घाव से ग्रस्त व्यक्ति के कपड़े वर्षों उपरांत भी पॉलिथिन की थैलियों में गीले पड़े रहते हैं। कुछेक अन्वेषण अधिकारी तो अज्ञानतावश एक पॉलिथिन थैली के ऊपर दूसरी और यहां तक की तीसरे पॉलिथिन थैले से ढक देते हैं, उनके विचार के खाद्य-सामग्रियों की तरह अधिक थैलियों में रक्तरंजित कपड़े अधिक सुरक्षित रह सकते हैं।

पॉलिथिन के निरंतर व अंधाधुंध प्रयोग से प्रदूषण तो फैलता ही है परंतु रक्त पर होने वाले इसके दुष्प्रभाव से जनमानस को कितनी हानि उठानी पड़ती है, इसके अनुमान का आकलन सहज रूप से नहीं किया जा

सकता। पॉलिथिन में रखे हुए कपड़ों से रिसकर आई रक्त की बूंदे पॉलिथिन थैले के नीचे एकत्रित होकर और पॉलिथिन सतह से प्रक्रिया करके विषैली गैसे छोड़ती हैं तथा इनके रंग की लालिमा भी पॉलिथिन में परिवर्तित हो जाती है, यदि अधिक समय हो जाए तो यही द्रव्य काली छटा बिखेरने लगता है।

हिमाचल प्रदेश सरकार ने पॉलिथिन के प्रयोग पर अविलम्ब रोक लगा दी। जब तक केन्द्र सरकार और राज्य सरकार इस दिशा में संयुक्त रूप से कोई ठोस कार्रवाई न करें तब तक संतोषजनक परिणाम देखने को नहीं मिलेंगे। हरियाणा सरकार ने ये पॉलिथिन की रोकथाम के लिए एक अभियान छेड़ा था और वर्ष 2001 में सरकार ने एक कानून बना कर इसके उपयोग को निषिद्ध कर दिया था परंतु व्यावहारिक रूप से ठोस कार्रवाई न होने के कारण इस अभियान के सृजनात्मक परिणाम देखने को नहीं मिले। बनाए गए कानून के अन्तर्गत पॉलिथिन के प्रयोग करने पर 5000 रुपए तक दण्ड लगाने का प्रावधान भी रखा गया, परंतु सख्त दिशा-निर्देश न होने के कारण इस अभियान का व्यापक प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं हो सका है।

अधिकांश घटनाओं में चिकित्सक अथवा अन्वेषण मृतकों के कपड़ों को अलग-अलग पैक न करके एक ही पॉलिथिन के पुलंदे में जमा कर देते हैं और विज्ञानी को कुर्ता-पायजामा, कच्छा-बनियान, जैकेट, पर्स इत्यादि प्रत्येक पर अलग-अलग परीक्षण करके अलग-अलग परिणाम देने होते हैं अतैव क्या एक ही पुलंदे में विशेष कर पॉलिथिन में लिपटे हुए पुलंदो का सीरोलोजिकल विश्लेषण अपनी वैज्ञानिकी विशिष्टता की साख को बचा पाएगा क्योंकि पॉलिथिन की सतहों में रखे हुए कपड़े वर्षों भर नहीं सूखते अपितु एक दूसरे से सटे होने के कारण और पॉलिथिन की सतहों पर दुर्गन्धयुक्त रक्त के एकत्रित होने पर विषैले रक्त से सने रसायन इनके विश्लेषणात्मक परिणाम में बाधा उत्पन्न कर सकते हैं। एक गारमेंट का प्रभाव दूसरे कपड़े पर चढ़ जाता है और एक जैसे ही परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं। वैसे तो मनुष्य के शरीर की लालिमा तो रक्त पर ही निर्भर है, परंतु उसके विश्लेषण के परिणाम अवश्य निष्पक्ष नहीं होंगे जो पॉलिथिन में एक-दूसरे के ऊपर लिपटे हुए हों। आज इसी वैज्ञानिकी युग में पुलिस, अनुसंधान के नित नए-नए ढंगों के ढूंढने में प्रयासरत हैं परंतु पॉलिथिन की उपयोगिता की बजाए इसकी दुरुपयोगिता की ओर ध्यान अवश्य जाना चाहिए। कपड़ों से निर्मित पुलंदों में से तो गैसें शनैः-शनैः निकलती हैं परंतु पॉलिथिन के कारण यह गैसे मार्ग अवरूद्ध होने से गुब्बारे के रूप में निकल कर गंदे खून की फौहारें छोड़ती हैं। यदि नासिका और मुख द्वार में इनक दुर्गन्धयुक्त तरलकण प्रवेश हो जाते हैं तो जैविकी प्रतिरक्षी रसायन के उपयोग से भी उपचार में महीनों लग जाते हैं। सीरम विज्ञानियों की नासिका द्वारों से पीला, गुलाबी, दूधिया रेशा बहने लगता है क्योंकि ये विषैले कीटाणु मस्तिष्क की कोशिकाओं को स्पंदित और उत्तेजित कर झिल्लियों से स्त्राव छोड़ती हैं जो आँख के नीचे गढ़ों में जमा होकर छींक के रूप में या समय-समय पर बाहर निकलते हैं। ऐसे में कान-नाक-गला (ENT) स्पेशलिस्ट भी कुछ नहीं कर सकता, केवल धूलकण या पॉलिथिन में तरल-युक्त पदार्थों को दूर रखने के लिए ही परामर्श दे सकता है। कई बार तो नासिका से निकले रवे रूपी केले जैसे पदार्थ में तो पॉलिथिन के टुकड़े भी दिखाई देते हैं। कुछेक अंवेषण अधिकारियों को यह नहीं पता कि वे तो परीक्षण करने वाले विज्ञानियों के स्वास्थ्य से खिलवाड़ कर रहे हैं, चाहे वे अनजाने में ही कर रहे हों। यदि कुछेक अंवेषण अधिकारी विधि विज्ञान प्रयोगशालाओं के वरिष्ठ वैज्ञानिकों से पैकिंग के लिए परामर्श करें तो ये सभी वैज्ञानिक इनके लिए निःशुल्क सेवाएं प्रदान कर सकते हैं, क्योंकि

राष्ट्रहित ही सर्वोपरि है। समय-समय पर विभिन्न संस्थाएं पॉलिथिन के दुरुप्रयोग को लेकर चिंतित हैं और इससे बचने के व्यापक सामाजिक नियम भी बनाए हैं, परंतु पुलिस विज्ञान में विषय-वस्तु का सही आकलन किया जाए तो सबसे अधिक आवश्यकता आज के दिन में पुलिस कर्मचारियों और स्वास्थ्य कर्मचारियों के हैं। वे ही इस दिशा में इनके विषैले व भयावह परिणामों से अवगत करवा कर सभी प्रकार की पैकिंग्ज में नया मोड़ दे सकते हैं जिसमें पॉलिथिन की अपेक्षा वस्त्र, हल्की लकड़ी और अन्य प्राकृतिक वस्तुओं में नमूने भेज कर राष्ट्र के प्रति अपनी कृतज्ञता का निर्वाह करने में प्रखर हो सकते हैं।

यदि पॉलिथिन का दुरुप्रयोग स्वीकार कर लिया जाए तो समूचे विश्व के साथ-साथ समस्त समाज विशेषकर सीरम वैज्ञानिक और पर्यावरण वैज्ञानिक गद्‌गद् हो जाएंगे कि इस अनूठी परंपरा से उभर कर लोगों ने इनको चैन की साँस तो लेने दी और उत्पीड़ित व्यक्तियों को न्याय की दिशा में एक अभूतपूर्व योगदान मिलेगा जो पॉलिथिन के दुरुप्रयोग के कारण गत कई शतकों से सीरम विज्ञान के परंपरागत परिणाम आने से वंचित है।

रक्त, जीवित उत्तक (Live Tissues) हैं। इसमें पाए जाने वाली नमी के कारण रक्त कोशिकाओं का क्षतिग्रस्त होना और विखंडन निरंतर चलता ही रहता है। पॉलिथिन में पैकिंग के कारण रक्त रंजित कपड़ों को वायु नहीं मिल पाती और इनमें पाए जाने वाली नमी के कारण सड़ने-गलने की प्रक्रिया (Decomposition) प्रारंभ हो जाता है। शरीर की सभी कोशिकाएं जीवित होती हैं। यदि इनको ऑक्सीजन के बिना अधिक देर तक रखा जाए तो यह मृत हो जाती हैं। इसी प्रकार पॉलिथिन में पैकिंग के कारण ऑक्सीजन अवरुद्ध होने और नमी के कारण रक्त कोशिकाएं खंडित हो जाती हैं जिससे अभीष्ट परिणाम की पुष्टि नहीं होती।

यदि कपड़ों पर लगे हुए ताजा रक्त और गले-सड़े कपड़ों पर पड़े हुए पुराने रक्त की तुलना की जाए तो अपेक्षाकृत रक्त के परीक्षण परिणाम पुराने रक्त रंजित कपड़ों पर केवल क्षीण हो सकते हैं, परंतु पॉलिथिन में रखे गए कपड़ों में रिसे रक्त के परिणाम तर्क-संगत नहीं होते। विशेषकर रक्त वर्गीकरण के परिणामों को व्यक्त करने का समीकरण ही बिगड़ जाता है। पॉलिथिन के रसायनों और जीवाणुओं के प्रभाव से रक्त वर्ग कुछ अन्य ही दिशा निर्धारित करते हैं।

पिछले गत दो-तीन दशकों से पॉलिथिन थैलियों के पुलिस अनुसंधान में अंधाधुंध प्रयोग से सीरम विश्लेषकों के सम्मुख कई विषम परिस्थितियां उत्पन्न हो गई हैं। कई बार तो उन्हें अपनी रिपोर्ट में यह लिखने के लिए विवश होना पड़ता है कि गले-सड़े कपड़ों की गठड़ी (Putrefied Bundle of Clothes) क्योंकि जैसे ही कपड़ों को अलग-अलग किया जाता है तो सड़न-प्रक्रिया के कारण उनके नन्हें-नन्हें टुकड़े, अलग-थलग हो जाते हैं और यह भी पता नहीं चलता कि कौन सा कपड़ा किस पोशाक का है।

प्रयोगशाला में तो कपड़ों और अन्य वस्तुओं की कांट-छांट करके रक्त सन्नित छोटे-छोटे आकार के टुकड़े विश्लेषण हेतु लिए जाते हैं। परंतु 5 प्रतिशत अमोनिया का घोल डालने से इन कपड़ों पर पनपे विषैले तत्व अपना दुष्प्रभाव नहीं छोड़ते। निःसंदेह रक्त परिणामों में गंभीर विकृतियां देखने को मिलती हैं और अधिकांश रिपोर्टस में तो यह टीका-टिप्पणी दी जाती है—Material Disintegrated यानि कि रक्त विखंडित हो चुका था। इसी प्रकार से रक्त वर्गीकरण की पुष्टि करने पर विविध परिणाम आने पर यह रक्त वर्गीकरण निष्कर्ष रहित (Inconclusive) पाया गया। शनैः-शनैः यह परंपरा कानूनविदों को भी असंमजस में डाल सकती है।

पॉलिथिन का प्रचलन एक विकराल रूप धारण कर चुका है जिसके वीभत्स परिणाम फोरेन्सिक विश्लेषण

में इसिलए दृष्टिगोचर हुए हैं कि इनमें रक्त रंजित पदार्थों को पैक करने से अनगिनित प्रकार के वॉयरस प्रयोगशाला में फैलते हैं। वॉयरस के इन रूपों की वृद्धि निरंतर रूप से होती रहती है। जब भी इनके अनुरूप वातावरण विकसति होता है तो ये रक्त को तो क्षतिग्रस्त करते हैं, साथ-साथ विश्लेषकों के स्वास्थ्य पर भी अपना दुष्प्रभाव छोड़ते हैं। ये वॉयरस अत्यधिक उष्मा और अत्यधिक ठंड को भी सहन करने में सक्षत होते हैं और अपनी तहें रक्तरंजित वस्तुओं पर जमा कर विषैले रसायन छोड़ते हैं और रक्तकणों को भक्षण करने के साथ उनकी प्रकिण्व क्रिया को भी अवरुद्ध करते हैं। पॉलिथिन में बंद रही वस्तुओं में ग्रीज और लेस जैसा तरल पदार्थ लटकता हुआ मिलता है और अधिकांश अवसरों में ये तंतु पारस्परिक रूप से जुड़े हुए मिलते हैं। रक्त रंजित वस्तुओं वाले पॉलिथिन के निचली सतहों पर गंदा रुधिर काली-पीली अवस्था में देखने को मिलता है जिनमें जैव-रासायनिक क्रियाएं होने व खमीर की प्रक्रिया से विभिन्न प्रकार के अल्कोहल, मूत्र, लवण और लहसुन की गंध सी लवण और लहुसन की गंध सी लिए और भी कई प्रकार के तरल पदार्थ तरलीय अवस्था में मोटे-मोटे रक्त थक्कों के साथ दृष्टिगोचर होते हैं। जब ये तरल पदार्थ ज़मीन पर गिरते हैं तो ज़मीन का रंग भी काला पड़ जाता है। ऐसी दशा में रक्तरंजित नमूनों का विश्लेषण हो ही नहीं पाता।

पॉलिथिन के अन्दर पैक रक्त रंजित वस्तुओं से उत्सर्जित विभिन्न विषैली गैसें और उष्मा रक्त में अनैच्छिक, प्रकिण्व प्रक्रिया के प्रारंभ होने से नए-नए प्रकार के यौगिकों के निर्माण की प्रक्रिया भी प्रारंभिक हो जाती है जिसके आशातीत परिणाम निकलने के अतिरिक्त प्रतिकूल परिणाम ही दृष्टिगोचर होते हैं और अन्वेषण अधिकारी हाथ मलता रह जाता है। उत्पीड़ित वर्ग को अनावश्यक हानि होने के साथ-साथ, न्याय प्रक्रिया की कड़िया भी धराशायी हो जाती हैं। सरकार न्याय प्रक्रिया को सुदृढ़ बनाने के लिए नित नए-नए आयाम ढूंढती है परंतु जाने-अनजाने में हो रही पॉलिथिन में पैकिंग की ये नासमझी चाल की विवशता के आगे वैज्ञानिक और अंवेषण अधिकारी हतप्रभ हो जाते हैं। कम से कम जघन्य अपराध से जुड़ी घटनाओं में पॉलिथिन पैकिंग तर्कसंगत नहीं है, अतैव पुलिस अधिकारियों को समयानुकूल आवश्यक मापदंड अपना कर अंवेषण अधिकारियों को सचेत करना चाहिए कि इस प्रकार की अवांछित कार्रवाई न करें। छिद्रयुक्त गत्ते के डिब्बों, महीन छिद्र और रन्ध्रयुक्त लकड़ी के डिब्बों में की गई पैकिंग में उच्च ताप उर्जा और उत्सर्जित गैसे बाहर निकलती रहती है। आद्रता भी सामान्य रूप से प्रभावित होती है और रक्तरंजित वस्तुओं की नमी भी समयानुसार समाप्त होती रहती है। बदबू कम होती हैं और सूक्ष्म प्राणियों का उद्‌गम और विकास भी कम से कम होता है। प्रकृति का यह अकाट्य नियम है पॉलिथिन में नया वातावरण पनपने से ऐसे-ऐसे नए सूक्ष्म प्राणियों का उद्‌गम होता है जिसकी सरंचना कई प्रकार से होती है जैसे कि नवविकास की दिशा में नए जीवों की उत्पति हो रही हो।

पॉलिथिन के कोनों में एकत्रित हुए काले-पीले द्रव्यों की खेप में यदि ब्लू लिटमस पेपर या रेड लिटमस पेपर को डुबो कर देखा जाए तो लाल रंग से लेकर परिवर्तित कई प्रकार के रंग दृष्टिगोचर होते हैं। कुछेक अंवेषण अधिकारी यहां तक कि अधिकांश चिकित्सीय वर्ग के अधीनस्थ कर्मचारी एक के ऊपर कई पॉलिथिन के लिफाफे , कपड़ों और अन्य रक्तरंजित वस्तुओं या उल्टी अथवा मवाद को पॉलिथिन की थैलियों में लपेट देते हैं जिससे प्रयोगशाला में नकारात्मक परिणाम आते हैं। विधि विज्ञान प्रयोगशालाओं और पुलिस धाम क्षेत्रों में पॉलिथिन के उपयोग की मनाही से संबंधित पाठ पढ़ाए जाते हैं जिससे कम से कम हरियाणा में तो पॉलिथिन के

प्रयोग में कटौती हो रही है।

यदि सीरम विज्ञानी पॉलिथिन में रखे हुए कपड़ों की कतरने विश्लेषण हेतु लाने के पश्चात् अपने हाथ व नाखून सैवलॉन, सोडियम हाईपोक्लोराइड और 70% इथेनोल से भी करें तो भी इनमें पनपे जीवाणुओं और वॉयरस से खतरा बना रहता है। वॉयरस इत्यादि तो 56^0 तापमान से ऊपर निष्क्रिय भी हो जाते हैं, परंतु हानिकारक वॉयरस के यदि अधिक ऊष्मा से रवे (Crystal) भी बन जाए तो भी अनुकूल परिस्थितियां मिलने पर ये पुनः सक्रिय हो उठते हैं। सीरम विज्ञानी रक्त कणों में तल छंटीकरण (Agglutination) प्रदर्शित करने के लिए प्रत्यक्ष रूप से रक्त कण प्रयोगित धागों या रेशों के ऊपर डाल कर 56^0 सेल्सियस तापमान पर इन्कयूबोटर में तापते हैं ताकि तल छंटीकरण निखरे और अवांछित जीवाणु हस्तक्षेप न करें। जब वॉयरस के अनुकूल वातावरण नहीं होता तो वे निष्क्रिय हो जाते हैं, अनुकूल परिस्थितियों में वॉयरस पुनः सक्रिय हो शरीर पर जानलेवा संक्रमण कर सकते हैं।

पॉलिथिन थैलियों में नमी ज्यों की त्यों बनी रहती है, परंतु सूती कपड़ों में पैक किए गए रक्त रंजित वस्त्र शीघ्र ही सूख जाते हैं। गुरुत्वाकर्षण के कारण नमी रिस-रिस कर पॉलिथिन के निचली सतहों पर तरल काले खून के रूप में दृष्टिगोचर होती है।

हमें इस बात की पूरी जानकारी होनी चाहिए कि यह प्लास्टिक की थैलियां आने वाले समय में भी गल-सड़ कर खत्म नहीं होगी। यह 'अमर-कचरा' हमारी पृथ्वी की सांसों को घोट रहा हैं। इसके दुष्प्रभाव से पर्यावरण को बचाना है, तो इसके इस्तेमाल पर रोक लगानी होगी। दुकानदार पॉलिथिन की कीमत सामान की कीमत के साथ जोड़ देते हैं जिससे ग्राहकों को यह मुफ्त की सुविधा लगती है। उन्हें अहसास भी नहीं हो पाता कि वे मौत के इस सामान के लिए कीमत भी चुका रहे हैं।

इन थैलों का अधिक इस्तेमाल करके हम न सिर्फ पर्यावरण को नुकसान पहुंचा रहे हैं, बल्कि रोगों को भी न्यौता दे रहे हैं। इन्हें यूं ही फेंक देने से नालियां जाम हो जाती हैं। इससे गंदा पानी सड़कों पर फैलकर मच्छरों का घर बनता है। यह कालरा, टाइफाईड, डायरिया व हेपेटाइटिस-बी जैसे गंभीर बीमारियों का कारण बनते हैं।

भारत में प्रतिवर्ष लगभग 500 मीट्रिक टन पॉलिथिन का निर्माण होता है, लेकिन इसके एक प्रतिशत से भी कम की रीसाइकिलिंग हो पाती है। अनुमान है कि भोजन के धोखे में इन्हें खा लेने के कारण प्रतिवर्ष 1,00,000 समुद्री जीवों की मौत हो जाती है।

इनकी रोकथाम के लिए विभिन्न रैलियों के माध्यम से पर्यावरण के संबंध में जागरुकता फैलाई जाए। इसी सिलसिले में करनाल में पॉलिथिन की बेकार थैलियों के समुचित निपटान के लिए जिले के शेखपुरा गांव में 21 करोड़ रुपए की लागत से पॉलिथिन ट्रीटमेंट प्लांट लगाए जाने की प्रक्रिया प्रारंभ हो चुकी है। प्लांट इस वर्ष के अंत तक बनकर तैयार हो जाएगा। पॉलिथिन ट्रीटमेंट प्लांट पर कार्य तेजी से चल रहा है तथा इस पर लगभग 21 करोड़ रुपया खर्च आएगा।

राष्ट्रीय संस्था (National Accreditation Board for Callibration and Testing-NABL) इस विषय को लेकर चिंतित है। उनके सदस्य भी यही चाहते हैं कि पॉलिथिन में सिमटी वस्तुओं को निकाल कर उनका पुनरक्षण कैसे किया जाए? पुलंदा संग्रह कक्ष यदि वातानुकूलित कर भी दिए जाएं तो पांच दिवसीय साप्ताहिक कार्यक्रम और अन्य अवकाशों के कारण उन दिनों ए.सी चलाना असंभव होता है। दूसरा स्वतः अग्नि प्रस्फुटित होना (Sparking) का भी खतरा हो सकता है। यदि प्रयोगशाला के कर्मचारी ही इन रक्तरंजित वस्तुओं को निकाल कर छत पर सुखाते जाएं तो परीक्षण के काम में

बाधा आ सकती है। बंदर इत्यादि जानवर भी इन वस्तुओं को क्षतिग्रस्त कर सकते हैं। यहां तक भी देखने में आया है कि रक्तरंजित वस्तुओं के ऊपर पॉलिथिन के टुकड़े ऐसे चिपक जाते हैं कि वे सहज-सहज पृथक करने पर वस्तुओं के साथ सटे रहते हैं जिससे वास्तविक खून का नमूना लेने में कठिनाई होती है फिर भी भरसक प्रयास किया जाता है कि इन खूनालूद टुकड़ों को कैविटी स्लाइड में 5% अमोनिया के घोल में सामान्य नमकीन घोल के साथ हिलाने डुलाने से कुछ सीमा तक सृजनात्मक परिणाम आ सकते हैं। विश्लेषकों के लिए यह आवश्यक हैं कि इन पॉलिथिन के बस्तों को उतार कर उनको कूड़ा कर्कट जलाने या दबाने की विधि से रासयनिक संयंत्रों से तहस-नहस करें अथवा ज़मीन के अंदर 250-300 सै.मी. नीचे जमीन में गड्डे बना कर गाढ़ दें अन्यथा तरह-तरह के रोगों के संक्रमण का खतरा मंडराया रहता है।

❑

अपराध अनुसंधान एवं निरीक्षण

डा. सी.पी. जैन

सहा. प्राध्यापक जे.एन. पुलिस अकादमी

सागर, (म.प्र.)

निरीक्षण, किसी घटना, व्यक्ति, वस्तु, स्थान के संबंध में जानकारी प्राप्त करने का एक तरीका या विधि है।

हम नित्य प्रति अपने चारों ओर हो रही घटनाओं को देखते हैं, उनका अनुभव भी करते हैं लेकिन ये कभी नहीं सोचते कि हम उनका अवलोकन कर रहे हैं। किसी भी समस्या या घटना के पर्यावरणीय कारणों को ढूंढ़ने के लिए एक अनुसंधानकर्ता जानबूझ कर निरीक्षण का सहारा लेता है। हम कह सकते हैं कि किसी घटना वस्तु या व्यक्ति के संबंध में अपने नेत्रों के माध्यम से हम जो भी दृश्य देखते हैं तथा उनसे संबंधित जो भी जानकारी प्राप्त करते हैं, वह अवलोकन कहलाता है। निरीक्षण अनुसंधान की एक महत्वपूर्ण विधि है।

पी.वी. यंग के अनुसार : निरीक्षण नेत्र के माध्यम से किया गया स्वाभाविक घटनाओं के संबंध में एक ऐसा क्रमबद्ध तथा विचार पूर्वक किया गया अध्ययन है, जो कि उनके घटित होने के समय पर किया जाता है। निरीक्षण का उद्देश्य विषम सामाजिक घटनाओं, सांस्कृतिक प्रतिरूपों अथवा मानव व्यवहार के अंतर्गत सार्थक अंतर्संबंधित तत्वों के स्वरूप तथा विस्तार को ज्ञात करना होता है।

Observation is a systematic and deliberate study through the eye of spontaneous occurrences at the time they occur. The purpose of Observation is to perceive the nature and extent of significant interrelated elements within complex social phenomena, culture patterns or human conduct.

Young P.V.

पुलिस का कार्य अपराधों की जांच उसकी रोकथाम एवं शांति व्यवस्था बनाए रखना है और उसके लिए निरीक्षण की भूमिका महत्वपूर्ण है। घटनास्थल निरीक्षण के पश्चात अनुसंधानकर्ता को मन ही मन घटना की पुनः संरचना (Reconstruction of Crime) करके देखना चाहिए जिससे यह अनुमान लगाया जा सके कि घटना किस प्रकार या कैसे घटी होगी। हमारा ये निरीक्षण या अवलोकन वैध (Valid) होना चाहिए।

जैसे—"किसी व्यक्ति के हाथ में चाकू का देखा जाना।" वास्तव में चाकू एक खतरनाक चीज है। ये एक आपराधिक उपकरण भी है। लेकिन इसका खतरनाक होना या न होना इस बात पर निर्भर करता है चाकू हाथ में लिए व्यक्ति का चाकू हाथ में लेने का उद्देश्य क्या है? हो सकता है वह व्यक्ति किसी को मारने के उद्देश्य से हाथ में चाकू लिए हो, आत्म रक्षा के लिए चाकू लिया हो या हो सकता है सब्जी काटने के लिए हाथ में चाकू लिया हो। कहने का तात्पर्य अवलोकन उस समय ही सार्थक है जबकि हम अवलोकित दृश्य के उद्देश्य को समझ सकें। अतः हमारा अवलोकन सतर्कता एवं वैज्ञानिक तरीके से किया जाना चाहिए। तभी निरीक्षण का उद्देश्य पूरा हो सकेगा। अतः निरीक्षण में निम्नलिखित विशेषताओं का होना जरूरी है :

1. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)
2. निश्चयात्मकता (Precision)
3. क्रम बद्धता (Systematic)
4. विश्वसनीयता (Reliability)

निरीक्षण के प्रकार (Types of Observation)

समय की परिवर्तनशीलता के साथ ही नित प्रति भिन्न-भिन्न प्रकार की घटनाएं एवं अपराध घटित होते

हैं। इन अपराधों की विवेचना के लिए, उपयुक्त तथ्य संकलन के लिए अलग-अलग तरह से निरीक्षण करना आवश्यक होता है। क्योंकि एक ही तरह से निरीक्षण करके सभी प्रकरणों में उपयुक्त तथ्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। अतः आवश्यकतानुसार निरीक्षण अलग-अलग प्रकार से किया जा सकता है जो इस प्रकार हैं :

1. नियंत्रित निरीक्षण (Controlled Observation)
2. अनियंत्रित निरीक्षण (Un controlled Observation)
3. सहभागी निरीक्षण (Participant Observation)
4. असहभागी निरीक्षण (Non-participant Observation)
5. अर्द्धसहभागी निरीक्षण (Semi participant Observation)
6. सामूहिक निरीक्षण (Group Observation)

1. जब अनुसंधानकर्ता नियंत्रित दशाओं में निरीक्षण करता है, जब उसे नियंत्रित निरीक्षण कहा जाता है। इसमें घटनास्थल, संबंधित व्यवहार, उपयोग में लाए जाने वाले उपकरण, निरीक्षणकर्ता आदि सभी पर कुछ न कुछ नियंत्रण रहता है। घटनास्थल नियंत्रण अर्थात् घटना के स्थान पर किसी भी बाहरी व्यक्ति को प्रवेश न करने दिया जाए और न ही पहले से वहां उपस्थित लोगों में से किसी को बाहर जाने दिया जाए, वहां से कोई वस्तु हटाने न दी जाए, पूरी स्थिति को यथावत रखने की व्यवस्था की जाए। यदि घटना घटित होती जा रही है तो निरीक्षणकर्ताओं में घटनास्थल विभाजित कर दिया जाए। व्यवहार नियंत्रण अर्थात् जो भी दृश्य है, जो हो चुका है या होता जा रहा है उसे उपकरणों के माध्यम से रिकार्ड किया जाए जैसे टेप रिकार्डर, कैमरा, वीडियो कैमरा आदि। उपकरणों का कब-कहां-कितना प्रयोग किया जाना है ये भी नियंत्रित एवं आवश्यकतानुसार निर्धारित रहता है ताकि पूरी घटना, पूरे परिदृश्य को रिकार्ड किया जा सके किसी एक पहलू को कम या अधिक रिकार्ड न किया जाए। क्योंकि अनुसंधान के लिए पूरे परिदृश्य का अध्ययन आवश्यक होता है। पता नहीं कहां से कौन सा महत्वपूर्ण बिन्दु हमें मिल सकता है। निरीक्षणकर्ता पर भी नियंत्रण रहता है कि वह शीघ्र अतिशीघ्र घटनास्थल पर पहुंचे संबंधित अनिवार्य शाखाओं को एवं अधिकारियों को सूचित करे जैसे एफ.एस.एल.टीम, मेडीकल टीम, डाग स्कॉट आदि। साथ ही अपनी भावनाओं अपने संवेगों पर नियंत्रण रखे। जिससे निरीक्षण की वस्तुनिष्ठता बनी रहे।

इस तरह नियंत्रित निरीक्षण क्रमबद्ध, वस्तुनिष्ठ एवं व्यवस्थित तरीके से किया जाता है। इससे मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही अध्ययन सम्भव होते हैं तथा वास्तविक तथ्य प्राप्त किए जा सकते हैं। तटस्थ एवं निष्पक्ष निष्कर्ष की प्राप्ती होने की संभावना बढ़ जाती है। साथ ही घटना के किसी भाग विशेष का बारीकी से अध्ययन संभव होता है।

(2) प्राकृतिक परिस्थितियों में बिना किसी नियंत्रण के किया गया निरीक्षण अनियंत्रित निरीक्षण है। ये उन परिस्थितियों में किया जाता है जबकि अचानक किसी क्रियाशील घटना का जैसे-आक्रामक भीड़, जुलूस, आमसभा आदि का निरीक्षण करना हो। ये निरीक्षण सरल, स्वतंत्र एवं स्वाभाविक होता है। पुलिस अधिकारियों को इस तरह का निरीक्षण बहुत बार करना पड़ सकता है। लेकिन इस तरह के निरीक्षण से प्राप्त निष्कर्ष में कुछ कमियां आ जाने की संभावना होती है। इसलिए इस तरह का निरीक्षण बहुत सतर्कता से किया जाना चाहिए। जैसे—अनियंत्रित दशाओं में या चलित घटनाओं के निरीक्षण में तथ्यों की सूक्ष्मतम जांच नहीं हो पाती है और निर्णय लेने होते हैं, उसके परिणामों को स्वीकारना पड़ता है जिससे परिणामों की विश्वसनीयता कम होने की संभावना होती है।

नियंत्रण के अभाव में निरीक्षणकर्ता के आत्मनिष्ठ होने की संभावना भी होती है अर्थात् घटना के तथ्यों पर निरीक्षणकर्ता की भावनाओं, विचारों, दृष्टिकोण का प्रभाव पड़ने की संभावना होती है जिससे उसका निरीक्षण वास्तविकता से हट सकता है।

- व्यक्तिगत पक्षपात की संभावना बढ़ जाती है।
- दूसरे की उपस्थिति में व्यवहार में कृतिमता आना स्वाभाविक होता है। लेकिन अनियंत्रित निरीक्षण में निरीक्षणकर्ता इस अभिव्यक्त व्यवहार को ही वास्तविक समझ कर तथ्य संकलन कर लेता है। इन्टेरोगेशन आदि में संदिग्ध व्यक्ति द्वारा अपनी वास्तविकता को छुपाते हुए जानकारी देने की संभावना होती है।

नियंत्रण के अभाव में व्यक्ति के अधिक Authoritarian होने की संभावना भी रहती है। निरीक्षण कर्ता अपने अधिकार एवं कर्तव्य के बीच हो सकता है उचित संतुलन न बिठा पाए। वो अधिकारों का अति-मूल्यांकन एवं कर्तव्यों का अल्प मूल्यांकन कर सकता है।

अनियंत्रित दशाओं में निरीक्षण होने से निरीक्षणकर्ता पर उपकरणीय उपयोग की बाध्यता भी नहीं होती जिसमें घटना की रिकार्डिंग की जा सके या महत्वपूर्ण तथ्यों को लिपिबद्ध किया जा सके। निरीक्षण कर्ता अपनी स्मृति Memory पर निर्भर रहता है। घटना के पश्चात् अनुसंधान कार्य के लिए वह अपनी स्मृति के आधार पर ही रिपोर्टिंग करता है। भूलना (Forgetting) एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। अतः अनुसंधान के दौरान पूर्व में देखी गई घटना के बहुत से तथ्यों का विस्मृत होना स्वाभाविक है। जिससे हमारा अनुसंधान कार्य दुष्प्रभावित हो सकता है।

साथ ही स्मृति में संजोए तथ्यों का निरीक्षणकर्ता के पास कोई भौतिक प्रमाण नहीं होता है जिससे यह जाना जा सके कि निरीक्षणकर्ता को जो कुछ याद है वही सत्य है और पूर्ण भी है।

स्मृति का विवेचन करने में आत्मनिष्ठता का आना भी स्वाभाविक है। अवलोकन पूर्णतः निरीक्षण कर्ता की ज्ञानेंद्रियों पर निर्भर करता है और यदि इनमें कोई कमी आ जाए या निरीक्षणकर्ता का ध्यान घटना से विचलित हो जाए तो अनुसंधान कार्य दुष्प्रभावित हो जाता है। अनियंत्रित निरीक्षण से प्राप्त तथ्यों की वैधता भी पूर्ण विश्वसनीय नहीं हो पाती है क्योंकि भौतिक प्रमाण के अभाव में अधिकारी इस बात से आश्वस्त नहीं हो पाते कि निरीक्षणकर्ता ने जो जैसा देखा एवं समझा है वास्तविकता में वो वैसा ही रहा होगा। साथ ही यह निश्चिंतता भी नहीं आ पाती है कि घटना को पूरी तरह देख लिया गया होगा या नहीं।

(3) किसी भी अपराध अनुसंधान में जब अनुसंधान कर्ता द्वारा यह निर्णय ले लिया जाता है कि अपराधी कौन हो सकता है? लेकिन उन्हें पकड़ने के लिए साक्ष्यों का अभाव होता है। दूसरों से ऐसे आपराधिक गेंग की जानकारी ले पाना भी संभव नहीं होता है तब इन संदिग्ध व्यक्तियों तक पहुंचने के लिए सहभागी निरीक्षण का सहारा लिया जाता है। इसमें निरीक्षणकर्ता को आपराधिक गिरोह का सदस्य बनना होता है। लेकिन ये बहुत आसान नहीं होता है क्योंकि किसी भी गिरोह में बाहरी व्यक्ति को सदस्यता मिलना कठिन होता है। सदस्यता के लिए निरीक्षणकर्ता को उनका विश्वास अर्जित करना होता है। उनके ही समान आचरण व्यवहार करना होता है। वैसे ही संवेगों को अभिव्यक्त करना होता है। उनकी बोल-चाल, खान-पान, रहन-सहन आदि में स्वयं को ढालना पड़ता है तब जाकर उनके वास्तविक क्रियाकलाप को जान पाता है। इस विधि द्वारा अपराध एवं आपराधिक गिरोह के सभी पहलुओं का सूक्ष्मतम अध्ययन संभव हो पाता है। सहभागी निरीक्षण से अपराधियों की उन व्यक्तिगत बातों का भी पता चल जाता है जिन्हें बाहर के व्यक्तियों के लिए जानना कठिन होता है। इस निरीक्षण से प्राप्त तथ्य स्वाभाविक एवं विशुद्ध होते हैं। सहभागी निरीक्षण द्वारा किसी भी घटना का मात्रात्मक, गुणात्मक एवं

भावनात्मक अध्ययन संभव होता है। निरीक्षण से प्राप्त तथ्यों की विश्वसनीयता के लिए इसमें निरीक्षण की पुनरावृत्ति भी संभव होती है।

सहभागी निरीक्षण से जितने महत्वपूर्ण एवं विश्वसनीय तथ्य प्राप्त होते हैं उतनी यह विधि कठिन भी है। निरीक्षणकर्ता की छोटी सी मानसिक एवं भावनात्मक कमजोरी पूरी विवेचना को दुष्प्रभावित करती है। अतः सहभागी निरीक्षण की अपनी कुछ कमियां भी हैं, जैसे- सहभागी निरीक्षण छोटे समूह या गिरोह पर ही संभव है। क्योंकि बड़े समूहों की सदस्यता लेना एवं इतनी सूक्ष्मता से अध्ययन करना सम्भव नहीं है।

सभी प्रकार के समूहों में सहभागी बनना कठिन होता है। अपराधी समूहों के सहभागी निरीक्षण के लिए वरिष्ठ अधिकारियों का निरीक्षणकर्ता पर विश्वास बहुत जरूरी है। अन्यथा निरीक्षण हो ही नहीं सकता है। जैसे- —डकैती गिरोह का अध्ययन करने के लिए गिरोह के साथ रहना, डकैती में उनके समभागी बनना जरूरी होता है तभी उनको पकड़वाया जा सकता है। निरीक्षणकर्ता डकैतों को पकड़वाने के लिए उनके साथ है इस बात पर विभाग का विश्वास होना बहुत जरूरी है।

सहभागी निरीक्षण में समय बहुत अधिक लगता है। क्योंकि सदस्य के रूप में स्वीकार कर लेने पर भी गिरोह द्वारा अपनी योजनाएं नये सदस्य के सामने गोपनीय रखी जाती हैं।

सभी निरीक्षणकर्ता सहभागी निरीक्षण करने में सफल नहीं हो पाते हैं। क्योंकि इसके लिए संवेगात्मक स्थिरता एवं व्यक्तित्व में गव्यात्मकता (Dynamic) का होना जरूरी है ताकि निरीक्षणकर्ता अपनी वास्तविकता को छुपाते हुए उनके साथ स्वाभाविक रूप से व्यवहार प्रदर्शित करता रहे। ताकि समूह के लोग उस पर संदेह न कर सकें।

निरीक्षणकर्ता में आत्म नियंत्रण का होना बहुत जरूरी है। किसी भी तरह की भावुकता, कोई भी प्रलोभन, कितनी भी प्रतिकूलता निरीक्षणकर्ता को उसके उद्देश्य से उसे वंचित न कर सके।

(4) असहभागी निरीक्षण में निरीक्षणकर्ता तटस्थ रह कर आपराधिक समूह का अवलोकन करता है। हर तरह के अपराध या घटनाओं में इस तरह का निरीक्षण किया जा सकता है। इन निरीक्षण में किसी तरह के जोखिम की सम्भावना भी नहीं रहती है तथा संवेगात्मक प्रभाव का भय भी नहीं रहता है लेकिन घटना का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन सम्भव नहीं हो पाता। निरीक्षणकर्ता दूर से तटस्थ रहते हुए अध्ययन करता है अतः कुछ तथ्यों का आंख से ओझल हो जाना भी सम्भव होता है।

(5) अर्द्ध सहभागी निरीक्षण अर्थात् सहभागी एवं असहभागी निरीक्षण के मध्य की स्थिति। इसमें निरीक्षण कर्ता सामान्य परिस्थितियों में समूह का सहभागी बन जाता है तथा तीव्र संवेगात्मक परिस्थितियों में तटस्थ हो सकता है। इससे वह स्वयं के संवेगात्मक नियंत्रण को बनाए रख पाता है। मुखबिर की स्थिति अर्द्धसहभागी निरीक्षणकर्ता के समान ही होती है। अर्द्ध सहभागी निरीक्षण बहुत उपयोगी होता है। इसमें निरीक्षणकर्ता समूह का सदस्य तो रहता है लेकिन वो आवश्यकतानुसार स्वयं को समूह के बाहर भी ला सकता है। लेकिन इसके लिए निरीक्षणकर्ता में व्यावहारिक दक्षता का होना बहुत जरूरी है।

निरीक्षणकर्ता को सतत, सतर्क एवं सजग रहने की आवश्यकता होती है। सजगता से ही वह अपने आप को आवश्यकतानुसार तटस्थ एवं सहभागी बना सकता है। निरीक्षणकर्ता को इतना स्वाभाविक दिखने वाला व्यवहार करना चाहिए कि तटस्थता की स्थिति में समूह में कोई उस पर संदेह न कर सके।

(6) सामूहिक निरीक्षण अर्थात् किसी घटनास्थल का एक निश्चित समूह द्वारा एक साथ किया जाने वाला निरीक्षण सामूहिक निरीक्षण है। सामान्यतः पुलिस अधिकारियों द्वारा सामूहिक निरीक्षण ही किया जाता है।

इस निरीक्षण में समूह के सभी सदस्य एक साथ किसी स्थल का निरीक्षण करते तो हैं लेकिन सभी को अपनी निरीक्षण रिपोर्ट अलग-अलग बनानी होती है। फिर निरीक्षण समूह का केंद्र व्यक्ति अर्थात् किसी घटना का अनुसंधान कर्ता (I.O) सभी निरीक्षण कर्ताओं से प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण करता है। फिर सभी रिपोर्ट में समान (Common) एवं एक दम असमान (Uncommon) तथ्यों को निकाल लेता है। फिर उनका सूक्ष्मता से निरीक्षण किया जाता है।

सामूहिक निरीक्षण नियंत्रित एवं अनियंत्रित दोनों ही परिस्थितियों में किया जा सकता है। इस निरीक्षण का सबसे बड़ा फायदा यह होता है कि एक ही स्थल को जब अधिक लोग रिपोर्ट करते हैं तो उनकी आपसी सूचनाओं से ही तथ्य प्रमाणित हो जाते हैं। उनकी वैधता सिद्ध हो जाती है। वैसे तो यह निरीक्षण प्रक्रिया बहुत महत्वपूर्ण है लेकिन इसमें अधिक निरीक्षणकर्ता एवं अधिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। जबकि पुलिस विभाग में कार्य की तुलना में कर्मचारी एवं संसाधनों की हमेशा से कमी महसूस की जाती है।

घटनास्थल एक ऐसा स्थान है जहां पर अपराधी, अपराध से पीड़ित व्यक्ति तथा अपराध के उपयोग में लायी गई वस्तुएं एक दूसरे के संपर्क में आती हैं। जिससे घटनास्थल पर वो अपने कुछ सूत्र छोड़ जाती हैं या घटनास्थल से कुछ सूत्र अपने साथ ले जाती हैं। लोकार्ड महोदय ने अपने विनिमय सिद्धांत से इस बात तो सिद्ध किया है।

लोकार्ड का पारस्परिक विनिमय सिद्धांत (Principle of exchange)

इस सिद्धांत के अनुसार जब एक वस्तु दूसरी वस्तु के संपर्क में आती है तो प्रथम वस्तु के कुछ तत्व अपने साथ ले जाती है तथा कुछ तत्व अपने पहली वस्तु में छोड़ जाती है। कोई कितना भी चतुर चालाक अपराधी हो वह घटनास्थल पर कुछ न कुछ तत्व अवश्य छोड़ जाता है तथा घटनास्थल से कुछ न कुछ तत्व अपने साथ ले जाता है। इसी कारण घटनास्थल निरीक्षण का विशेष महत्व है। घटनास्थल की स्थिति वहां से प्राप्त वस्तुएं हमें अपराध के संबंध में बहुत महत्वपूर्ण सूचनाएं देती हैं। इनकी मदद से ही हम अपराध और अपराधी को जोड़ सकते हैं।

घटनास्थल पर सूचनाएं अनेक रूपों में प्राप्त हो सकती हैं। जैस—अंगुल चिन्ह, पदचिन्ह, अपराध में उपयोग किए गए हथियार के चिन्ह, चाकू, गोली का खाका आदि। इसके साथ ही कपड़ा, धागा, रंग, धूल, खून, कीचड़, जूता, कोई विशेष गंध आदि। अतः अनुसंधानकर्ता का परम कर्तव्य है कि घटनास्थल का सावधानी से अवलोकन करें। प्राप्त साक्ष्यों को सुरक्षित रखें तथा विशेषज्ञों की मदद से उनका विश्लेषण करे। घटना स्थल से किसी भी भौतिक साक्ष्य को एकत्र करने से पूर्व अनुसंधानकर्ता को घटना स्थल का विभिन्न कोणों से फोटो ले लेना चाहिए। अनुसंधान के दौरान किसी भी साक्ष्य की घटना स्थल पर वास्तविक मौजूदगी को इस फोटो में बार-बार देखा जा सकता है तथा उसे अपराध एवं अपराधी से संबंधित करके व्याख्या करने में मदद मिल सकती है तथा कोई भी साक्ष्य अवलोकन या निरीक्षण से बच नहीं सकता है। साथ ही यदि घटना स्थल पर अन्य कोई साक्ष्य अधिक महत्वपूर्ण लगता है वो पृथक से उसका भी फोटो ले लेना चाहिए। ये फोटो सिर्फ अनुसंधान में मदद नहीं करते बल्कि जिस समय मामला न्यायालय में जाता है तब अनुसंधानकर्ता द्वारा की गई जांच की पुष्टि भी करते हैं। तथा न्यायाधीश को घटनास्थल की वास्तविक स्थिति का अवलोकन भी कराते हैं। अनुसंधानकर्ता द्वारा बनाया गया नक्शा मौका भी इन फोटो से स्पष्ट हो जाता है।

अवलोकन के दौरान जो भी वस्तु अपराध अनुसंधान के महत्व की लगती है अनुसंधानकर्ता को उस वस्तु की मौके पर ही गवाहों के समक्ष जप्ती बनाना चाहिए तथा

ठीक तरह सील बन्द करके लेबलिंग कर देना चाहिए। निरीक्षण की सूक्ष्मता एवं वैज्ञानिकता को ध्यान में रखते हुए अनुसंधानकर्ता को आवश्यकतानुसार फोरेन्सिक साइंस विशेषज्ञ, पुलिस फोटोग्राफर, डाक्टर आदि को घटनास्थल पर ही बुलवा लेना चाहिए क्योंकि सामान्य नजरों से कोई भी साक्ष्य छूटने की सम्भावना हो सकती है परन्तु विशेषज्ञों की नजरों से सूक्ष्म निरीक्षण होता है कोई भी साक्ष्य छूटने की सम्भावना नगण्य हो जाती है। इसीलिए घटनास्थल निरीक्षण में विशेषज्ञों का योगदान महत्वपूर्ण होता है।

निरीक्षण की विधियां (Methods of Observation)

किसी भी घटनास्थल या एक ऐसा स्थान जहां पर किसी घटना से संबंधित साक्ष्य पाए जाने की संभावना है उसका निरीक्षण बहुत सतर्कता एवं सावधानी से किया जाना चाहिए ताकि कोई भी साक्ष्य नजरों से छूट न पाए इसके लिए कुछ निश्चित विधियों का उपयोग किया जाना सार्थक होता है। निरीक्षण किए जाने वाले स्थान को ध्यान में रखकर निरीक्षण विधियों का उपयोग किया जा सकता है। प्रमुख निरीक्षण विधियां इस प्रकार हैं :

(i) पट्टी विधि (Strap Method)

इस विधि में निरीक्षणकर्ता द्वारा घटनास्थल को छोटी-छोटी पट्टियों में बांट दिया जाता है तथा एक-एक पट्टी स्थल का बारीकी से निरीक्षण किया जाता है। ताकि कोई भी साक्ष्य दिखने से छूट न सके।

निरीक्षण की बारीकी के लिए दोहरी पट्टी विधि (Double strap Method) का उपयोग भी किया जा सकता है। इस विधि में घटनास्थल या अन्य किसी भी स्थल जिसका निरीक्षण किया जाना है। आड़ी और खड़ी पट्टियों में बांट दिया जाता है तथा दोनों ओर से (Horizental and vertical) निरीक्षण किया जाता है। इसमें एक ही स्थान दो-दो बार निरीक्षणकर्ता की आंखों से गुजरता है। इससे किसी भी वस्तु के छूटने की संभावना नहीं रहती है।

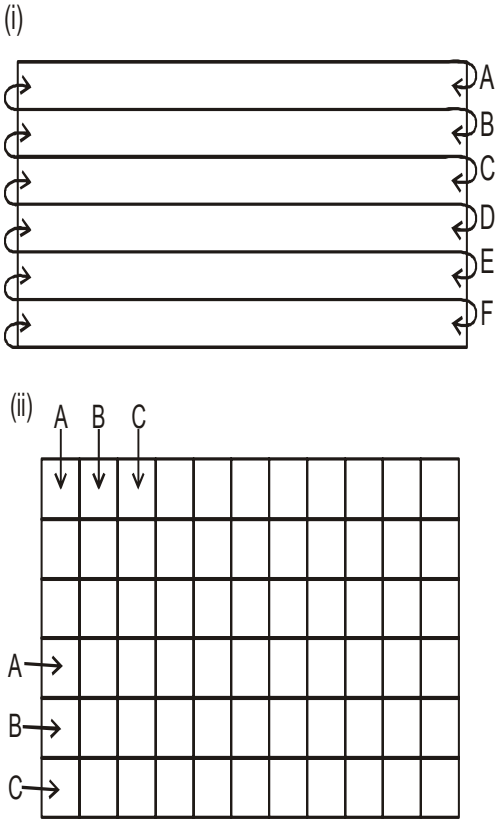

(2) वृत्ताकार विधि (Spiral Method)

यदि निरीक्षण किया जाने वाला स्थान वृत्ताकार होता है तब यह विधि अधिक उपयोगी होती है। इस विधि में निरीक्षण कर्ता निरीक्षण किये जाने वाले स्थान में बाहर से केन्द्र की ओर तलाशी लेते हैं। निरीक्षण की सूक्ष्मता के लिए केंद्र से बाहर की ओर भी निरीक्षण किया जा सकता है।

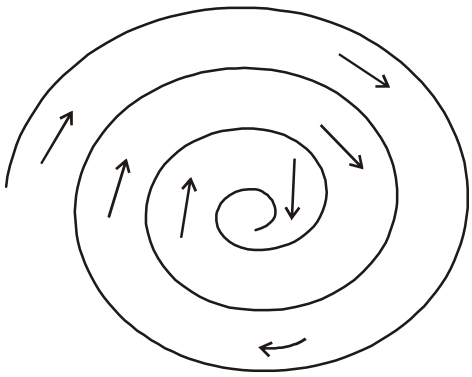

(3) खण्ड विधि

जब घटना स्थल या निरीक्षण किया जाने वाला स्थान बड़ा होता है तब स्थल को खंडों में बांट दिया जाता है। फिर प्रत्येक खंड का बारीकी से निरीक्षण किया

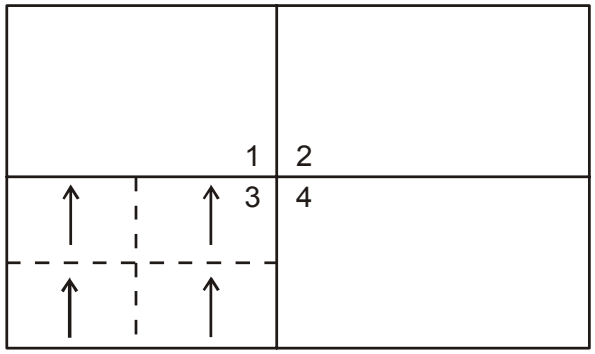

जाता है। इसमें हर एक खंड को एक कंपलीट स्थान मान कर निरीक्षण किया जाता है। इसमें अधिक सूक्ष्मता से निरीक्षण किया जाना सम्भव होता है।

(4) चक्र विधि (Wheel Method)

जब निरीक्षण स्थल गोलाकार होता है तब चक्र आकार या गाड़ी के चके के आकार में ही उसे छोटे-छोटे खंडों में बांट दिया जाता है। निरीक्षणकर्ता केंद्र में खड़ा हो जाता है। यदि निरीक्षणकर्ता एक से अधिक हैं तो सभी निरीक्षणकर्ता केन्द्र में एकत्र हो जाते हैं। तथा केंद्र से बाहर की ओर निरीक्षण करते हुए आते हैं। इस तरह सभी निरीक्षणकर्ता सभी खंडों का निरीक्षण कर लेते हैं।

इस प्रकार निरीक्षणकर्ता आवश्यकतानुसार उक्त

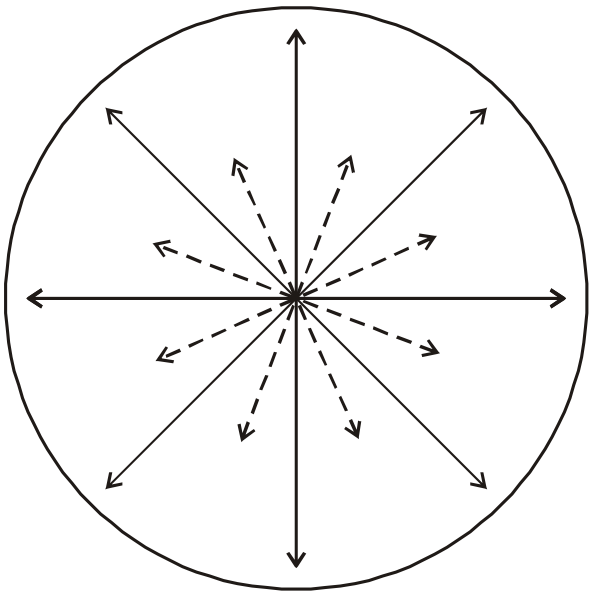

विधियों में से किसी भी विधि का उपयोग कर घटनास्थल की बारीकी से अध्ययन कर सकता है। पुलिस के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य अपराध अनुसंधान में निरीक्षण एक महत्वपूर्ण कड़ी है। अपराध अनुसंधान की सफलता के लिए घटना स्थल निरीक्षण के पश्चात् अनुसंधान कर्ता को मन ही मन घटना की पुनः संरचना (Reconstruction of Crime) करके देखना चाहिए तथा यह अनुमान लगाना चाहिए कि घटना किस प्रकार घटित की गई होगी। निरीक्षण के द्वारा ही अपराध अनुसंधान को सही दिशा मिल पाती है। इसीलिए पुलिस कार्य में निरीक्षण का अधिक महत्व है।

❑

पारिवारिक हिंसा का बच्चों पर दुष्प्रभाव

विनोद मिश्रा

शोध परियोजना सहायक

ई-1/8 पुलिस कालोनी, नेहरू नगर

भोपाल

किसी भी राष्ट्र के लिए बच्चे उस राष्ट्र का भविष्य होते हैं उनकी उचित देखभाल एवं समुचित विकास देश की जिम्मेदारी है। बच्चों का समुचित शारीरिक एवं मानसिक विकास, मनोवैज्ञानिक जागरूकता, नैतिक स्वास्थ्य राष्ट्र की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। साथ ही सभी बच्चों को विकास के दौर में पर्याप्त अवसर प्रदान करने, सामाजिक न्याय देने की जिम्मेदारी, राष्ट्र की है लेकिन दुर्भाग्यवश विश्व के विशालतम जनतांत्रिक देश के बच्चे अपने अधिकार पानें में असमर्थ हैं।

प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तौर पर लाखों परिवारों में जहां महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं। वही उनके बच्चे घरेलू हिंसा के दुष्परिणामों से पीड़ित हैं।

दिसंबर 2005 में महिलाओं के प्रति पारिवारिक हिंसा निरोधक विधेयक अधिनियम के रूप मे पारित किया गया। पारिवारिक हिंसा अधिनियम 2005 को क्रांतिकारी कहा जा सकता है, क्योंकि यह महिलाओं के संरक्षण की गारंटी देता है लेकिन पुरुष प्रधान व्यवस्था के कारण पारिवारिक हिंसा अधिनियम को सुचारू ढंग से लागू कर पाना दुष्कर है।

परिभाषा :

दिसंबर 2005 में महिलाओं के प्रति पारिवारिक हिंसा को रोकने हेतु विधेयक को अधिनियम के रूप में पारित किया गया। इस अधिनियम की धारा-3 में पारिवारिक हिंसा को इस प्रकार परिभाषित किया गया है—

"परिवार में किसी भी बालिका या महिला के साथ पुरूष वर्ग द्वारा किया जाने वाला हर ऐसा कार्य पारिवारिक हिंसा माना जाएगा जिसमें महिला या बालिका का जीना मुश्किल हो जाए या उसे मानसिक शारीरिक कष्ट हो उनके साथ अमानवियता या क्रूरता करना भी हिंसा माना गया है। दहेज के लिए महिला को प्रताड़ित करना महिला को कानूनी, सामाजिक, शारीरिक आर्थिक आवश्यकताओं से वंचित रखना और बच्चा या लड़का न होने पर व्यंग करना या प्रताड़ित करना भी पारिवारिक हिंसा मानी जाएगी।"

"महिलाओं के विरुद्ध पारिवारिक हिंसा अधिनियम 2005 धारा-4 के अनुसार कोई व्यक्ति जिसे पारिवारिक हिंसा की जानकारी मिले या प्राप्त हो वह संबंधित अधिकारी को सूचना दे सकता है और इसी अधिनियम की धारा-20 में वर्णित है कि मजिस्ट्रेट प्रताड़ित को मुआवजा, कानूनी मदद, सुरक्षित आवास, चिकित्सकीय सुविधा आदि दिला सकता है। जो व्यक्ति इन कानूनों का उल्लंघन करते हैं उन्हें एक साल की सजा या 20,000 रु. जुर्माना या दोनों ही रूपों में दण्डित किया जा सकता है।"

पारिवारिक हिंसा का अर्थ :

किसी व्यक्ति द्वारा चोट पहुंचाने या तोड़ने फोड़ने के इरादे से किसी दूसरे व्यक्ति या चीज के खिलाफ ताकत का इस्तेमाल करना हिंसा है जो प्रायः किसी फायदे के लिए की जाती है। हिंसा एक ऐसी दबावकारी प्रकिया है जो दूसरों को दबाने के लिए प्रयोग की जाती है। साधारणतः दूसरे से अपनी इच्छा मनवाने के लिए अपनी ताकत दिखाने के लिए खुद को ताकतवर महसूस करने के लिए इस्तेमाल की जाती है।

उद्देश्य :

प्रस्तुत शोधपत्र पारिवारिक हिंसा का बच्चों पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव पर प्रकाश डालता है एवं साथ ही निम्न लिखित उद्देश्यों को पूरा करता हैं :

(1) पारिवारिक हिंसा की व्यापकता
(2) पारिवारिक हिंसा का बच्चों पर दुष्प्रभाव
(3) बच्चों के मानवाधिकारों का ज्ञान
(4) दुष्प्रभाव को कम करने हेतु उपाय
(5) निष्कर्ष

अध्ययन पद्धति :

उपरोक्त लिखित उद्देश्य विभिन्न प्रकार के द्वैतीयक स्त्रोतों के माध्यम से विश्लेषित किए जाएंगे यह द्वैतीयक स्त्रोत व्यापक इंटरनेट सर्वे, क्राइम रिकार्ड ब्यूरो गृह मंत्रालय नई दिल्ली, पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लिए एक हैं।

(1) पारिवारिक हिंसा की व्यापकता :

पारिवारिक हिंसा का इतना भयावह रूप है कि महिलाएं अपने आप को घर में ही सुरक्षित महसूस नहीं करती। प्रत्येक तीन मिनट में एक महिला कहीं न कहीं हिंसा का शिकार हो रही हैं, इनमें सबसे अधिक मामले पति एवं ससुराल वालों द्वारा उत्पीड़न के होते हैं।

राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (एन.सी.आर.बी.) की रिर्पोट 2007 के अनुसार 2007 में 75,930 महिलाएं अपने पति या ससुराल वालों की यातनाओं का शिकार बनी महिलाओं के खिलाफ हिंसा के सबसे ज्यादा मामले इसी तरह के हैं। रिपोर्ट के अनुसार सबसे ज्यादा अपराध आंध्र प्रदेश में दर्ज किए। 2007 में महिलाओं के खिलाफ अपराधों में 12.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई और कुल 1,85,312 मामले दर्ज हुए थे। महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों की संख्या पिछलें पांच वर्षों से लगातार बढ़ रही है।

(2) पारिवारिक हिंसा का बच्चों पर दुष्प्रभाव

पारिवारिक हिंसा का असर मात्र हिंसा सहने वाले व्यक्ति तक सीमित न रह कर संपूर्ण परिवार पर असर डालती है एवं सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव उस परिवार में रहने वाले बच्चों के कोमल मन पर पड़ता है जिसे हम निम्न बिंदुओं के आधार पर समझ सकते हैं।

(क) बच्चों में भावनात्मक असुरक्षा की भावना
(ख) बच्चों के अधूरे व्यक्तित्व का विकास
(ग) परिवार एवं दाम्पत्य जीवन के प्रति कड़वाहट की भावना
(घ) आपराधिक प्रवृत्ति का विकास
(च) बच्चों के मानवाधिकारों का हनन।

(क) बच्चों में भावनात्मक असुरक्षा की भावना

पारिवारिक हिंसा जिस परिवार में घटित होती है उस हिंसा का सबसे ज्यादा असर उस परिवार में रहने वाले बच्चों के कोमल मन में भावनात्मक आघात के रूप में पड़ता है। पारिवारिक हिंसा का कई बार बच्चों तक को शिकार बनना पड़ता है। जिससे अपने आपको वे परिवार में भय के वातावरण का शिकार बना पाते हैं। जिससे उनके मन में भावनात्मक रूप से असुरक्षा की भावना बन जाती है।

(ख) बच्चों के अधूरे व्यक्तित्व का विकास

पुरुष वर्ग द्वारा नारी के प्रति हो रही पारिवारिक हिंसा का दुष्प्रभाव परिवार, समाज एवं देश पर तो पड़ता ही है सबसे ज्यादा असर बच्चों के व्यक्तित्व विकास पर पड़ता है। अनेकानेक बच्चे हैं जो माता-पिता के मध्य घटित होने वाली पारिवारिक हिंसा की वजह से दब्बूपन हीनभावना एवं कुंठाग्रस्त हो जाते हैं। जिससे वे अपनी समस्याओं एवं परेशानियों को किसी से नहीं कहते एवं तनावग्रस्त रहते हुए अधूरे व्यक्तित्व विकास का शिकार बन जाते हैं।

(ग) परिवार एवं दाम्पत्य जीवन के प्रति कड़वाहट की भावना :

पारिवारिक हिंसा का दुष्प्रभाव बच्चों के मन में इतना गहरा पड़ता है कि वे अपने परिवार के प्रति नफरतसील हो जाते हैं। वर्तमान सामाजिक परिवेश में लड़कें-लड़कियों में एकाकी जीवन का चलन बढ़ रहा है। इसके पीछे कही न कहीं पारिवारिक जीवन के प्रति असंतोष व्याप्त रहता है, उन्होंने अपने परिवार में पारिवारिक सुख का एहसास नहीं किया होता है।

(घ) आपराधिक प्रवृत्ति का विकास

जिन परिवारों में घरेलू हिंसा की घटनाएं घटित होती हैं उन परिवारों में माता-पिता के मध्य तनाव का माहौल निर्मित हो जाता है एवं वे अपने बच्चों की तरफ पूरा ध्यान नहीं दे पाते जिसकी वजह से अधिकांश बच्चे शिक्षा ग्रहण करने की बजाय गलत दोस्तों की संगत में पड़कर धीरे-धीरे अपराध के रास्तों पर चल पड़ते हैं एवं यदि समय पर उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया गया तो वे आगे चलकर आपराधिक गतिविधियों में संलग्न हो अपराधी बन जाते हैं।

(ङ) बच्चों के मानवाधिकारों का हनन

पारिवारिक हिंसा बच्चों के मानवाधिकारों पर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से दुष्प्रभाव डालती है। घरेलू हिंसा प्रत्यक्ष तौर पर बच्चों के मूलभूत मानव अधिकारों का हनन है। इसमें बच्चों के स्वास्थ के अधिकार, स्वतंत्रता के अधिकार एवं सुरक्षा के अधिकारों का हनन होता है एवं चाइल्ड राइट कन्वेंशन के विभिन्न अनुच्छेदों का भी उल्लंघन घरेलू हिंसा के अंतर्गत होता है। घरेलू हिंसा से पीड़ित परिवारों में बच्चों के शिक्षा के अधिकारों का सर्वाधिक हनन होता है।

(3) दुष्प्रभावों को कम करने हेतु उपाय

पारिवारिक हिंसा का दुष्प्रभाव सबसे अधिक उस परिवार में रहने वाले बच्चों के मन मस्तिष्क पर पड़ता है जिसका असर उनके सुचारू ढंग से विकास पर भी पड़ता है। इन दुष्प्रभावों को कम करने हेतु निम्नलिखित उपाय हो सकते हैं :

(अ) बच्चों के मन में भावनात्मक सुरक्षा की भावना जाग्रत करना

(ब) बच्चों का संपूर्ण विकास करना।

(स) दाम्पत्य जीवन की मधुरता बताना

(द) अच्छे कार्य करने के लिए प्रेरित करना

(इ) बच्चों के मानवाधिकारों का पालन करना।

(अ) बच्चों के मन में भावनात्मक सुरक्षा की भावना जाग्रत करना :

पारिवारिक हिंसा के परिणाम स्वरूप बच्चों के मन मस्तिष्क में स्वयं के प्रति असुरक्षा की भावना आ जाती है। यदि माता-पिता आपस में मिलकर बच्चों के मन से अप्रिय घटनाओं की तस्वीर हटानें की कोशिश करें एवं उनके मन में भावनात्मक सुरक्षा के बीज बोएं जिससे बच्चों में आत्मविश्वास वापस आएगा एवं उनके मन से असुरक्षा की भावना समाप्त होगी। जिससे वे निर्भीक एवं निडर होकर देश एवं समाज में अपनी सहभागिता निभाएंगे।

(ब) बच्चों का संपूर्ण विकास करना

बच्चों के संपूर्ण रूप से विकसित करने हेतु उन्हें सुखद घटनाओं, स्वास्थ्य का ध्यान रखकर, नौतिक संस्कार, अच्छी शिक्षा, व्यवहार कुशलता, एवं रचनात्मक कार्यों से जोड़कर रखना चाहिए जिससे बच्चों का चहुमुखी विकास होगा एवं जिसके द्वारा बच्चों के मन में पड़ने वाले दुष्प्रभावों को कम किया जा सकेगा।

(स) दाम्पत्य जीवन की मधुरता बताना

पारिवारिक जीवन में माता-पिता को बच्चों के समक्ष सदैव मधुर वातावरण बनाए रखकर बच्चों के मन में बैठे दाम्पत्य जीवन के प्रति कड़वाहट को कम किया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप बच्चों में एकाकी जीवन के प्रति बढ़ रहे झुकाव को कम कर दामपत्य जीवन की तरफ लाया जा सकता है।

(द) अच्छे कार्य करने के लिए प्रेरित करना

बच्चें परिवार की देन हैं अभिभावकों को अपने बच्चों के मन में प्रारंभ से ही अच्छे कार्य करने के लिए

प्रेरित करना चाहिए, जिससे उनमें आत्मविश्वास बढ़ेगा एवं उनका मन संतुष्ट होगा एवं वे बुद्धिमान प्रतिभाशाली नागरिक बन सकेंगे जिसके कारण बच्चों के मन में फैले दुष्प्रभाव को कम किया जा सकेगा। जिससे वे संस्कारवान नागरिक बन सकेंगे।

(इ) बच्चों के मानवाधिकारों का पालन करना

मानवाधिकारों के विश्वघोषणापत्र के अनुच्छेद 25(2) में कहा गया है–प्रत्येक माता-पिता तथा शिशु को मातृत्व और शिशु की विशेष देखभाल और सहायता प्राप्त करने का अधिकार है।

(1) अनुच्छेद 26(1) के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है शिक्षा कम से कम प्रारंभिक एवं मौलिक अवस्था में निःशुल्क एवं अनिवार्य होगी।

(2) अनुच्छेद 26(3) के अनुसार माता-पिता को अपनी संतान के लिए शिक्षा की किस्म चुनने का अधिकार है।

संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में भी बच्चों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए व्यवस्था की गई है।

अनुच्छेद 36(6) के अनुसार बच्चों को वे सुविधाएं दी जाए जिससे उनका स्वतंत्रता और स्वाभिमान के वातावरण में विकास हो सके एवं बचपन एवं यौवन के शोषण से एवं नैतिक व भौतिक अभाव से रक्षा कि जा सके।

अनुच्छेद 45 के अनुसार 14 वर्ष के सभी बच्चों को राज्य की ओर से अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था राज्य करेगा।

यदि बच्चों के मानवाधिकारों का पालन सुचारू ढंग से किया जाए तो स्वतः ही बच्चों के ऊपर पड़ने वाले दुष्प्रभाव कम हो जाएंगे।

निष्कर्ष :

निष्कर्षतः यह कहा जाएगा कि पारिवारिक हिंसा का रूप उस अमरबेल के समान है जिसका दुष्परिणाम उसके आसपास रहने वाले तक के लोगों को भी भुगतान पड़ता है। किंतु यदि इसके दुष्प्रभावों से उस परिवार के बच्चों को दूर रखना है तो माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समय-समय पर की गई बच्चों के प्रति अनुशंसाओं एवं मानवधिकारों का सही प्रकार से पालन किया जाए तो पारिवारिक हिंसा के दुष्परिणाम से बच्चों को बचाया जा सकता है। तभी स्पष्ट के भविष्य के कर्णधारों का समुचित विकास किया जा सकेगा।

संदर्भ :

श्रीवास्तव दीप्ति - महिलाओं के प्रति अपराध, 2008
क्राइम इन इंडिया - नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो, 2006
पारिवारिक हिंस अधिनियम - 2005 भारत सरकार, नई दिल्ली
मिश्रा विनोदव - घेरलू हिंसा एवं पुलिस की भूमिका (पुलिस विज्ञान, अंक-103, 2008)

❑

नक्सली हिंसा और पुलिस

कु. दीप्ति श्रीवास्तव

289, सैनिक कुंज नन्दा नगर,
पो. कूड़ाघाट,गोरखपुर (उ.प्र.)—273008

नक्सलवाद के समर्थक, व्याख्याकार और विरोधी इस बात पर लगभग एकमत है कि नक्सलवाद हिंसा का जन्म आजाद भारत की सरकार द्वारा किए गए भूमि सुधारों की विफलता से हुआ है, नक्सलवाद वास्तव में सामाजिक, आर्थिक समस्या है जिसका समाधान भी सामाजिक भेदभाव को समाप्त करके, सम्पत्ति का समान वितरण कर आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करके एवं राजनैतिक तथा प्रशासनिक भ्रष्टाचार पर अंकुश लगा कर हो सकता है। नक्सली हिंसा का तांडव बढ़ता जा रहा है जो गंभीर चिंता का विषय है। सवाल यह है कि हमें बेलगाम नक्सली हिंसा पर अंकुश लगाने की कार्यनीति बनानी चाहिए थी। विकास की मुख्यधारा से लगातार कटते जा रहे गरीबों और आदिवासियों की हित रक्षा की पहल करनी चाहिए।

सफर चार दशक का :

25 मई 1967 : सी.पी.आई. मार्क्सवादी की वैचारिक धारा से अलग होकर चारू मजूमदार के नेतृत्व में पश्चिम बंगाल के दार्जीलिंग जिले के नक्सलवादी गांव में नक्सलवाद का जन्म हुआ। आदिवासी युवाओं द्वारा स्थानीय जमींदारों के जुल्म के खिलाफ हथियार युक्त संघर्ष शुरू हुआ। इसका एक ही लक्ष्य था—हिंसा के जरिए सत्ता परिवर्तन और समतामूलक समाज की स्थापना।

1969 : मजूमदार के नेतृत्व में लेनिन के जन्मदिन पर नई पार्टी सी.पी.आई. (मार्क्सवादी-लेनिनवाद) का गठन किया गया।

18 जुलाई 1972 : पुलिस द्वारा पकड़े जाने के बाद पुलिस हिरासत में ही मजमूदार की मृत्यु से नक्सली आंदोलन को जबरदस्त धक्का पहुंचा। सी.पी.आई. (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) का केंद्रीय संगठन चरमरा गया। बाद के कुछ सालों में आंदोलन कई धाराओं में बंट गया।

22 अप्रैल 1980 : आंध्र प्रदेश में कोंडापाली सीतारमैया ने पीपुल्स वार ग्रुप की स्थापना की।

1999 : माओवादी संगठनों में एकता के प्रयास शुरू मुख्यतः बिहार में सक्रिय सी.पी.आई. (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) के पार्टी युनिटों का पीपुल्स वार ग्रुप में विलय हो गया।

2004 : 1992 में शांति वार्ता को सुगम करने की पीपुल्स वार ग्रुप के प्रयास पर लगाए गए प्रतिबंधों को आंध्र प्रदेश ने हटा दिया। माओवादी कम्यूनिस्ट केंद्र (एमसीसी) पीपुल्स वार ग्रुप में समाहित हो गए और सी.पी.आई. (माओवादी) का जन्म हुआ।

2004-2009 : नक्सलियों ने भारत के 626 जिलों के एक तिहाई हिस्सों में अपनी उपस्थिति सुदृढ़ की। नक्सल हिंसा में अब तक 3000 से ज्यादा जाने जा चुकी हैं।

स्त्रोत : इण्डिया टूडे, जनवरी 2008 राष्ट्रीय सहारा, अक्टूबर 2009

नक्सलवाद आंदोलन के 1967 में शुरू होने के बाद से अब तक भारत की राजनीतिक परिदृश्य काफी बदल गया है। नक्सलियों ने देश को एक दिशा दी है। आज नक्सलियों का संदेश देश में चारों तरफ पहुंचा है। समाज के सबसे कमजोर तबके, कुचले हुए वर्गों, खासकर आदिवासियों में नक्सली आंदोलन तेजी से फैल रहा है। बिहार, झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, आंध्रप्रदेश जैसे राज्य आतंरिक उपनिवेश के शिकार हुए हैं। राज्यों में

रहने वाले अधिकांश जनता भंयकर गरीबी में रहती है। इन राज्यों वाले अधिकांश जनता की जमीन पर सामंती अभिजात्य वर्गों का कब्जा है। जिनका खेतीबारी से दूर तक कोई रिश्ता नहीं है। यह अभिजात्य लोग शहरों में रहते हैं। लेकिन जमीन पर इनकी कब्जेदारी बरकार है। देश की 20 प्रतिशत आबादी आज भी खेती से अपना जीवन यापन करती है लेकिन भूमि पर कब्जा शून्य के बराबर है। इतनी बड़ी आबादी की बुनियादी समस्या को नक्सल आंदोलन ने आवाज दी है।

दिन प्रतिदिन नक्सलियों का आंदोलन हिंसक होता जा रहा है। वैसे हिंसा इस आंदोलन की शुरूआत से अभिन्न अंग रहा है। इनका कहना है कि सत्ता बगैर हिंसा के नहीं मिल सकती। नक्सलवाद देश के उन्हीं राज्यों में फैल रहा है जहां के गरीब, पिछड़े और आदिवासी क्षेत्रों के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन हुआ है। केंद्र और राज्य सरकारों की मिलीभगत से यहां के प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के बदले इन क्षेत्रों का बुनियादी विकास नाम मात्र का भी नहीं हुआ। बस इसी बात को लेकर यहां के गरीब एवं पिछड़े आदिवासी हथियार उठाने को मजबूर हो गए हैं। यहां के लोग शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार जैसी बुनियादी सुविधाएं चाहते हैं लेकिन सरकार अभी तक इन लोगों को यह सुविधा मुहैया नही करवा पाई है।

नक्सली चपेट में कई प्रदेश

बिहार : 38 में से 34 जिलों में नक्सली अपना प्रभाव बढ़ाते जा रहें है। डेढ़ सौ से ज्यादा प्रखंडों में बकायदा जन अदालतें चल रही हैं। नेपाल के माओवादी से संपर्क खतरनाक हद तक हैं।

पश्चिम बंगाल : 350 गांव चपेट में है। पुरूलियों, बाकुडा से चलता है निर्देशन। मुंह छिपा करते हैं प्रेस कांफ्रेस।

छत्तीसगढ़ : 2300 से अधिक गांव नक्सली प्रभावित। बस्तर, दांतेवाड़ा, बीजापुर, नारायणपुर, कांकेर, राजनादगांव की स्थिति बदत्तर। कुल 14 हजार किमी. से ज्यादा क्षेत्रफल में चलता है दबदबा।

आंध्रप्रदेश : उड़ीसा के सीमावर्ती गांवों में नक्सलियों के हौसले बुलन्द वारांगल, नालमला, करीमनगर, उत्तरी तेलंगाना और पालनाडु में हालत बदतर।

महाराष्ट्र : नेपाली माओवादी की 130 से ज्यादा गुरिल्ला संगठन सक्रिय। चंद्रपुर, गादिया, मडारा, यवतमाल नादेड और गढ़चिरैली में बना रखा है अड्डा।

मध्य प्रदेश : 300 गांव नक्सल प्रभावित। पूरा इलाका 3000-4000 किमी. का क्षेत्रफल

उत्तर प्रदेश : 700 गांव चपेट में आ चुके हैं। सोनभद्र, मिर्जापुर और चमेली में नक्सलियों के बड़े अकुड़े जो अपने गठबंधन से दिशा निर्देश प्राप्त करते रहते हैं।

झारखण्ड : 24 में से 18 जिले चपेट में आ चुके हैं। नक्सलियों के नेता लिसन दा और गणपति पर आंदोलन के संचालन की जिम्मेदारी पूरे देश में नेटवर्क फैलाने और हथियार इकट्ठे करने की मुहिम जारी।

पुलिस ने लालगढ़ के आदिवासियों पर अत्याचार किया। जिससे क्षुब्ध होकर लालगढ़ के आदिवासियों द्वारा क्षत्रधर के नेतृत्व में पुलिस अत्याचार विरोधी जन साधारण कमेटी का गठन हुआ। जिससे आंदोलन के चलते नवम्बर 2008 से 2009 तक लालगढ़ पुलिस प्रशासन विहीन रहा। कमेटी की 14 मांगों में इलाके का विकास जैसे मुद्दे के अलावा निरीह, ग्रमीणों व आदिवासियों महिलाओं पर पुलिस अत्याचार के लिए जिम्मेदार जिले के तत्कालीन ए.एस.पी. को गांव वालों के समक्ष कान पकड़कर उठक बैठक करने की मांग रखी गई। राज्य सरकार की बात तो दूर पुलिस प्रशासन ने भी यह मांग भी नहीं मांगी।

नक्सलियों का कहना है कि पुलिस वाले उनका समर्थन करने वाले बेकसूर आदिवासियों को निशाना

बनाते हैं। जबकि पुलिस का तर्क है कि नक्सली आदिवासियों की आड़ में बंदूक तंत्र लाना चाहते हैं जो संभव नहीं है। पुलिस ने अब सख्त आक्रामक रवैया अख्तियार करना शुरू कर दिया है तो नक्सली भी पलटवार में जब भी उनको मौका हाथ लगता है, वे सुरक्षा बलों से भरी जीप विस्फोटक के जरिए उड़ा देते हैं। नक्सलवाद के सूरमा अब निहत्थे आदिवासियों पर निशाना साध रहे हैं और आदिवासियों से भरे ट्रक को उड़ा देते रहे हैं। जब भी पुलिस कोई बड़ा अभियान चलाकर नक्सलियों को मारती है तो नक्सली संगठन बंद की अपील करके पुरे इलाके में सड़क परिवहन, ठप कर देते हैं। हाल में एक अजीब से फरमान से सभी ट्रान्सपोर्टर परेशान थे। नक्सली फरमान था कि किसी भी पुलिस वालों को बस में न बैठाया जाए। इस फरमान से डरे बस वालों ने बसे खड़ीकर दी। इस फरमान से उन पुलिस कर्मियों का जीना भी दूभर कर दिया जो ड्यूटी पर तैनात थे।

नक्सलियों द्वारा पुलिस पर किए गए हमलें

वर्ष-2007

1. 10 जुलाई को उड़ीसा के दांतेवाडा में 24 पुलिसवालों की हत्या।

2. 16 दिसम्बर – उड़ीसा दांतेवाडा कारागार पर हमला, 303 कैदियों को उड़ाया।

वर्ष-2008

1. 20 अक्टूबर को छत्तीसगढ़ के बीजापुर में नक्सली हमलों में 12 जवान शहीद।

2. 16 जुलाई को माओवादियों द्वारा बिछाए गए बारूदी सुरंग से 17 पुलिसकर्मियों की जाने गई।

3. 29 जून-नक्सली हमले में उड़ीसा के मल कांगिरी में 36 सुरक्षा कर्मियों की मौत।

4. 15 फरवरी—उड़ीसा के नयागढ़ में पुलिस स्टेशन पर नक्सलियों में धावा बोलकर 14 पुलिस कर्मियों की हत्या कर दी।

वर्ष-2009

1. 08 अक्टूबर को महाराष्ट्र विधानसभा चुनाव से पांच दिन पहले चिरौली जिले के लहिरा इलाके में 17 पुलिसकर्मियों की घात लगाकर हत्या।

2. 12 जुलाई को डी.एस.पी. सहित 23 पुलिस वालों की छत्तीसगढ़ के राजनंदगांव में हत्या।

3. 12 जून माओवादियों ने झारखंड के नवादा में 9 पुलिसकर्मियों को मौत के घाट उतार दिया।

4. 10 जून को झारखंड में बारूदी सुरंग से 11 जवानों की जानें गई।

स्रोत : राष्ट्रीय सहारा, अक्टूबर 2009

नक्सली हमले बढ़ते जा रहे हैं। सरकार इस समस्या का गंभीरतापूर्वक हल नहीं निकाल पा रही है। सरकार की कथनी और करनी में हमेशा की तरह ही इस मुद्दे पर भी अंतर है। 2003 से अकेले झारखंड में 329 पुलिसकर्मी नक्सली हमलों में शहीद हुए हैं जबकि पूरे कारगिल युद्ध के दौरान 415 सैनिक ही शहीद हुए थे। हाल ही के कुछ घटनाओं में नक्सलियों में मध्यकालीन बर्बरता की हद पार कर दी। नक्सली हमलों में गरीब कांस्टेबल और सब इंसपेक्टर मारे जा रहे हैं। यह केवल कानून व्यवस्था का प्रश्न नहीं रह गया। यह सरकार की विफलता है। जिन नक्सलियों से हमारे पुलिस बल को लोहा लेना पड़ा रहा है उनके पास आधुनिक हथियार का पूर्णतया अभाव है और वे वाहन और दूसरे जरूरी साधनों से भी वंचित हैं। जबकि नक्सली अत्याधुनिक हथियारों का सहारा लेकर इन घटनाओं को अंजाम दे रहे हैं। समय-समय पर नक्सली पुलिस स्टेशनों पर हमला कर न सिर्फ जवानों को मौत की नींद सुला देते हैं बल्कि उनके हथियार भी लूट लेते हैं।

नक्सलवाद कोई प्रायोजित आतंकवाद नहीं है, जिससे सख्ती से निपटा जाए। नक्सली लोग भारत के लोग हैं और सिर्फ बातचीत से मुख्यधारा में लाया जा सकता है। देश के नेताओं ने नक्सलियों को वो सारे हक देने होंगे जिनके वे हकदार हैं नक्सली प्रभावित क्षेत्रों में जाकर वहां के लोगों से सीधे बातचीत करनी होगी।

नक्सलवाद भारत की धरती से संचालित एक आंदोलन है एक विचार धारा है जिससे सैन्य कार्रवाई या सख्ती से नहीं निपटा जा सकता है। इसका कारण स्थानीय है और लोगों का स्थानीय असंतोष है इसके समाधान के लिए फैसले थोपने से काम नहीं चलेगा। बल्कि इसका समाधान संभव है इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण कदम निम्न हैं—

1. केंद्र और राज्य सरकारों को यह समझना होगा कि नक्सली क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधन मुनाफा कमाने के लिए नहीं, बल्कि उन क्षेत्रों की बहुमूल्य विरासत है जिसके दोहन के बदले विकास हो।

2. नक्सली क्षेत्र में स्कूल और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र खोले जाएं तथा रोजगार दिए जाएं।

3. सरकार को इनकी बुनियादी समस्या जिसमें मुख्य रूप से जल जंगल, जमीन का हल तलाशना होगा, इसमें जुड़ी समस्याओं का समाधान करना होगा। विकास के बुनियादी सवाल को नए सिरे से परिभाषित करना होगा।

4. नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में जाकर वहां के लोगों से सीधे बातचीत करनी होगी उन्हें बुनियादी सुविधा देने के साथ राजनीति की मुख्य धारा में भी लाना होगा।

5. नरेगा, पंचायती राज और ग्रामीण क्षेत्रों की योजनाओं को कारगर और प्रभावी ढंग से लागू करना होगा।

6. नेताओं के साथ नौकर शाही को भी नक्सली क्षेत्रों का दौरा करके वहां की समस्याएं देखनी होंगी। जिससे यह लोग यह समझ सकें की देश की सरकार इन क्षेत्रों का विकास चाहती है।

7. सरकार को सोशल इंजीनियरिंग का फार्मूला नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के लिए अपनाना चाहिए। जिससे बिना हिंसा के वे लोग समाज तथा देश की मुख्यधारा में शामिल हो सकें।

❑

वर्दी का असली बल, वर्दीधारी की ज़मीर

डा. मीना शर्मा

प्रवक्ता संस्कृत—राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला
हिमाचल प्रदेश

भूमिका :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। पृथ्वी पर मानव जाति के उत्पतिकाल से ही अस्तित्व, व्यवस्था तथा सुरक्षा का भाव सदैव रहा है। तदर्थ अनुशासित (वर्दीधारी) रक्षक बल की उपस्थिति अनिवार्य रूप से रहती है। भारत में सुरक्षातंत्र का इतिहास काफी पुरातन है। मनुसंहिता में अपराधों की रोकथाम के लिए राजा को यह अधिकार दिया गया है कि वह जनता पर होने वाले अपराधों की रोकथाम के लिए तथा अपराधियों को दंडित करने के लिए कुछ व्यक्तियों को नियुक्त करे तथा चौकियों एवं गश्तदलों की स्थापना करे। किसी ने यह भी ठीक ही तो कहा है :

'निसिचर हीन करो महि, भुज उठाए प्रण कीन्ह'
'इह काजु कीन्हे बिनु, मोहि कहां विश्राम'

अस्त्र-शस्त्र हाथ में लिए अपराधियों-दुराचारियों-खलों से लोहा लेने वाला कर्तव्यनिष्ठ संगठन कोई और नहीं, अपितु पुलिस बल ही है। छेविगिंग पाल की दृष्टि में 'पुलिस प्रशासन की क्षमता उसके वैधानिक बल (Legitimate Power) के एकाधिकार से प्राप्त होती है, जिसके अंतर्गत इसकी सता की कारगुजारी (Authority) सुरक्षा, संवर्धन, कल्याण एवं रोटी, कपड़ा, मकान संबंधित सभी अवांच्छित विषयों पर्यंत फैली होती है।' ऐतिहासिक परिपेक्ष्य की दृष्टि से देखा जाए तो प्राचीन एवं मध्ययुगीन भारत का सुरक्षातंत्र 'यथा राजा तथा प्रजा' के अन्योन्य समन्वयात्मक सौहार्द पर अधिकांशतः आधारित था। संस्कारी प्रजा भी सोचती थी, "सांई इतना दीजिए, रहे कुटुंब समाए। मैं भी भूखा न रहूं, मेरा साथ भी भूखा न जाए।'

ऐसे सहिष्णु एवं परस्पर मिल बांट कर जीवन यापन वाले पर्यावरण में विधिवत पुलिस बल की आवश्यकता ही नहीं लगी। इसलिए भारत में आधुनिक पुलिस संगठन की अविर्भाव ब्रिटिश शासनकाल से है। सर्वप्रथम 'रॉयल आमरिश कांस्टेबुलरी' की स्थापना सन, 1843 में चार्ल्स नेपियर ने की। फिर 1860 ई. में 37 सर्कुलर्ज को मिलाकर भारतीय पुलिस अधिनियम बनाया गया जो 22 मार्च 1861 से पूरे भारत में लागू हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति उपरांत संविधान निर्माताओं ने तारतम्य एवं स्थायित्व बनाए रखने के लिए पुलिस व्यवस्था को वैसा ही बनाए रखा। लेकिन बदलते वैश्विक संदर्भ में तथा लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था में पुलिस का कार्यक्षेत्र नए-नए आयाम ले रहा है। जिसके सुचारू क्रियान्वयन के लिए वर्तमान सुरक्षा व्यवस्था की नियमावली में सैद्धांतिक नीतिगत परिवर्तन, संशोधन की महती आवश्यकता है। परंतु पुलिस सुधारों के साथ-साथ, व्यवहारिक-वैज्ञानिक पोलिसिंग के लिए वर्दी का असली बल, वर्दीधारी की जमीर विषय पर गहन चिंतन को सांकेतिक करती है ताकि जागृत आधुनिक जनमानस के समक्ष पुलिस बल सक्षम-सुदृढ़-सूरत और सबल-सार्थक-सीरत की सीख, पहचान तथा शान का प्रतीक बन इक्कीसवीं सदी की सुरक्षा बलों के नवसृजन का सशक्त कर्णधार बन सके।

वर्दी की परिभाषा

वर्दी और पुलिस एक दूसरे के पर्याय हैं। यद्यपि वर्दी तो दूसरे कुछेक विभागों के कुछेक कर्मचारी भी पहनते हैं, परंतु जो वर्दी का बल, वर्दी की गरिमा-शान-मान-बांकापन पुलिस एवं सुरक्षा बल से शारीरिक-सौष्ठव एवं मानसिक सबल तथा आध्यात्मिक संवेदना का संचार

करता है, वह अन्यत्र कहीं भी नहीं है। वर्दी ही पुलिस तंत्र का आत्म तत्व है जो वर्दीधारी को अनुशासन, श्रेणीबद्धता, समन्वयता, तत्परता, समयबद्धता का पाठ आधारभूत रूप से पढ़ाती है तथा उस पर आंतरिक सुरक्षा तथा सुचारू कानून व्यवस्था की जटिल एवं संवेदनशील जिम्मेदारी सौंपती है। पासिंग ऑऊट परेड के समारोह में प्रशिक्षित जवान को फील्ड जॉब में उतारने से पहले ही उसे शपथ दिलाई जाती है कि वह अपने किसी दुष्कृत्य से वर्दी को बदरंग कादापि नहीं होने देगा, अपितु वर्दी की आन के लिए अपनी जान तक बलिदान करेगा। वर्दी को देखकर एक तरफ तो दुर्दांत अपराधी भय खाता है, तथा दुसरी ओर कमजोर-बेसहारा पीड़ित व्यक्ति वर्दी में सरंक्षण एवं सुरक्षा की शरणस्थली तलाशता है। नैतिक मूल्यों के ह्रास वाले भौतिकवादी आधुनिक पाश्चात्य संगत प्रभावित समय में भी वर्दी पुलिस बल के रक्त में आदर्शों की उदात्तता तथा जीवन मूल्यों का शोभन संचार कर जवान के अन्तर्मन में संचित भारतीयता, राष्ट्रीयता और मानवीयता को जीवंत रखती है। यह संचित शक्ति ही वह वर्दीरूपी मेरूदंड है, जिसकी भित्ती पर पुलिस संगठन का विशाल भवन खड़ा है। वर्दी का खाकी वर्ण भी एक सुधाबीज है। खाक्+ई = खाकी रंग वाली वर्दी को पहन कर प्रत्येक कर्मचारी अपने काम को सेवा,समपर्ण, बलिदान, भावनायुक्त, विनम्र धरतीपुत्र बन अपने आप को खाकसार, तृणा तुल्य, अहंकार शून्य, सहज-स्वभाविक, सुलभ सभ्य-शालीन बन परिस्थिति अनुसार सख्त एवं नरम रवैया अपनाकर, पारंपरिक पोलिसिंग के अनावश्यक दंभ से शून्य होकर, अपने कर्तव्य का सुचारू निर्वहन करने में सक्षम होता है। दुष्टदलन के लिए शस्त्ररूपी कुल्हाड़ा हाथ में लिए परशुराम बन अहर्निश समाज सुरक्षा एवं कल्याण के लिए तत्पर रहता है। पुलिस कर्मी का बाहरी लिबास और वो भी विशेष परिधान अर्थात वर्दी, खाकी रंग वाली, स्वच्छ, धुली हुई, खिली-खिली, स्त्री की हुई, चुस्त-दुरूस्त स्मार्ट वर्दी अपने बांके बलिष्ठ जवान में गजब का आकर्षण तो पैदा करती ही है, इसके साथ-साथ वर्दी की आंतरिक पवित्रता रूपी शुचिता-जमीर को अपने सात्विक विचार, आचार एवं व्यवहार में लाकर वर्दी की चहुंमुखी गरिमा को लोगों के सामने प्रकट करते हैं। जब जवान का शरीर, वस्त्र , चित्त, मन और आत्मा आध्यात्मिक आह्लादकारी संवेदना से युक्त होकर अपनी कर्मस्थली में उतरता है तो उसकी वर्दी राष्ट्र एवं मानव-मात्र की उज्ज्वल सुरक्षात्मक आशा का प्रतीक बनती है।

बल-पुलिस बल से अभिप्राय

वर्दी का बल अर्थात ताकत, शक्ति, सत्व एवं सामर्थ्य से है। बल यद्यपि कई किस्म का होता है यथा शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, भौतिक एवं बौद्धिक आदि। 'वर्दी का बल' से सभी किस्म के बल के भावों का समावेश है, क्योंकि पुलिस बल के आधुनिक जवान के चरित्र-चित्रण की ग्रूमिंग बहुमुखी है। 'संघे शक्ति' अर्थात संगठन-मिलजुलकर, एकजुट होकर, एक समय में एक टारगेट पर निशाना साथ कर सफल होना ही पुलिस बल का ध्येय है और पुलिस का बल है, पुलिस के अधिकार क्षेत्र में दी गई शक्तियां। भारतीय संविधान में पुलिस के कार्यक्षेत्र को राज्यसूची में गिना गया है। भारतीय संविधान के प्रति सत्यनिष्ठा रखकर पुलिस को नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा का पुनीत कर्तव्य वहन करना है। सरकार की कार्यकारिणी का अंग होने के कारण कानून की परिधि में रह कर जनता द्वारा कानूनों का पालना करवाना है ताकि समाज में व्यवस्था, सुरक्षा तथा शांति का वातावरण बना रहे। अपराध और अव्यवस्था का अभाव ही पुलिस की क्षमता का मापदंड है। समाज के हर क्षेत्र में पुलिस की भूमिका दृष्टिगोचर होती है। आपूर्ति व्यवस्था से लेकर सामाजिक बुराईयों तथा अपराधों को दूर करना होता है। इक्कीसवीं सदी में विश्वभर में हुए अधिकतर सामाजिक सुधार एवं

सूचना प्राद्यौगिकी के क्षेत्र में आई क्रांति के पश्चात् लोक प्रशासन विशेषकर पुलिस-प्रशासन की परंपरागत कार्य प्रणाली में व्यापक परिवर्तन हुए हैं।

इस कड़ी में सुशासन, प्रशासनिक पारदर्शिता, जवाबदेहता, जन-उन्मुखता एवं संवदेनशीलता का पुलिस कर्तव्य-परायणता में समावेश हुआ है। तदर्थ कानून प्रवर्तन में बहुत सी नई-नई चुनौतियां पुलिस तंत्र के सम्मुख आ खड़ी हुई हैं। ऐसे में पुलिस के सर्वोच्च अधिकारी से लेकर सिपाही तक सभी को अपनी परंपरागत सोच बदलनी होगी। यद्यपि आज के अर्थलिप्सु परिवेश में मानसिकता बदलना अपने आप में एक चुनौतिपूर्ण कार्य है। फिर भी वैश्वीकरण के वैज्ञानिक पोलिसिंग के इस युग में भी सद्गुणों का सहारा लेकर पुलिस वर्ग इस असंभव दिखने वाले, मानसिकता-परिवर्तन वाले काम को भी सृजनात्मक आध्यात्म विज्ञान-परक बना सब संभव कर सकता है। अध्यात्म महासागर है, विज्ञान की विभिन्न धाराओं का/विज्ञान तर्क संगत, तथ्य-परिपूर्ण तथा सत्य प्रदर्शक होता है और पुलिस विज्ञान तो समाज में सदवृति संवर्धन एवं दुष्प्रवृति उन्मूलन, जमीर-परक, आधारशिला पर आधारित है।

बल अर्थात आध्यात्मिक बल, जमीर

मानव शरीर सत्व, रजस एवं तमस गुण युक्त, पंचमहाभूतों से निर्मित है, जिसमें आत्मा (ज़मीर), ईश अंश सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहता है।

पुलिस संगठन अपनी कर्तव्य-परायणता रूपी जीवन साधना में ज़मीररूपी सात्विकता का उत्तरोत्तर अभिवर्धन कर समावेश करने में सक्षम होता है, तो उतना ही अधिक, उसके व्यक्तित्व में सत्य, साहस समता, निःस्वार्थता, धैर्य, स्नेह, शांति एवं कल्याण जैसे दैवी गुणों को संपदा का अनायास विकास होता जाता है और वह अनीति, अधर्म, अव्यवस्था, अराजकता का मुकाबला करने में सहज ही समर्थ हो जाता है और सब समस्याओं का हल निकालता है।

इस तरह ज़मीर मानव शरीर में सूक्ष्म होकर भी कितने विशाल-विस्तृत महान कार्यों की आधारशिला बनती है।

बल अर्थात प्रदत्त शक्तियां (Powers)

पुलिस वर्दी का असली बल वर्दीधारी की ज़मीर में इसलिए भी है कि जब पुलिस कर्मी अपने कार्यान्वयन हेतु जनता में जाता है, तो कानून प्रदत्त उसकी शक्तियों के साथ-साथ उसका व्यक्तिगत व्यवहार एवं चरित्र चिंतन उस के कार्यों के माध्यम से झलकता है और वह झलक राष्ट्र में अपनी अमिट छाप छोड़ती है। भारत जो विश्व का सब से बड़ा लोकतंत्र है, जिसमें, असली प्रभुसत्ता जनता में निहित होती है। (Democracy is of the people, by the people & for the people) पुलिस अपनी सत्ता राज्य (Government) से प्राप्त करती है। Govenment अर्थात् सरकार एक ऐसी राजनैतिक संस्था है जो अपनी सत्ता, संगठन, विभागों आदि का प्रयोग सुचारू सामाजिक कानून व्यवस्था चलाने के लिए करती है ताकि समाज में सर्वतोन्मुखी विकास और कल्याण हो सके। सरकार सता की प्रकृति से ही पुलिस की भूमिका तय होती है। इस तरह समाज (जनता), राज्य (सरकार) और पुलिस-ये त्रिगर्त अन्योन्य संबंध से एक दूसरे पर निर्भर रहते है। पुलिस का सर्वप्रथम दायित्तव है, सरकार की कार्यकारिणी का अंग होने के नाते समजा में शांति-व्यवस्था बना कर जनता के जान-माल की रक्षा करना है। सरकार की कुशलता की कसौटी पुलिस की कार्यप्रणाली के मानदंड पर होती है। पुलिस की भूमिका और प्रकृति एक ओर तो राजनैतिक विकास के दबावों और तनावों से तय होती है तथा दूसरी ओर उभरती हई सामाजिक प्रक्रियाओं, आदर्शों तथा प्रतिमानों से निर्धारित होती है इस तरह ये त्रिकोणी संबंध बहुआयामी और सर्वग्राही प्रकृति के होते हैं। पुलिस फील्ड कार्य में जनता-प्रतिनिधि, जनता एवं जनता की समस्याओं को समझने-सुलझाने

के लिए प्रखर-दक्ष-विवेकी व्यक्तित्व पुलिस में वांछित होता है। पुलिस यातायात नियंत्रण, गश्त (Patrol) अन्वेषण (Ivestigation) सम्मन तामील वी.आई.पी.ड्यूटी, सामाजिक अव्यवस्था, कदाचार के नियंत्रण आदि फील्ड कार्यों के द्वारा जनता के समक्ष उपस्थित रहती है। पोलिसिंग में Investigation, Patrolling or Random Patrolling रीढ़ की हड्डी का काम करते हैं। इससे सुचारू यातायात नियंत्रण, अपराधों पर रोक, अपराधियों के ठोर-ठिकानों का पता, Crime Prone or Non-crime-prone areas का ज्ञान असामाजिक गतिविधियों तथा लोगों में सुरक्षा एवं संतोष का पता चलता है। पुलिस भी Pro-active रहती है। पुलिस बल अर्थात् Force & Coercion व्यवस्था रखने के लिए अपने आप में एक authority होती है। परिस्थिति की गंभीरता के अनुसार पुलिस का बल mild verbal अथवा किंचित सख्त अथवा (abusive language) के रूप में हो सकता है। अस्त्र शस्त्र, अश्रुगैस, Flash lights- canines का प्रयोग भी हो सकता है। Hard core अपराधियों के साथ कानून के दायरे में रह कर excessive force का प्रयोग सूचना इकट्ठा करने के लिए किया जा सकता है। मानवीय संवेदनशीलता, विवेक, ज़मीर की आवाज पुलिस नेतृत्व में अहम भूमिका निभाती है ताकि पुलिस पेशे के दायित्व को भी ठीक तरह से निभाया जा सके तथा किसी के साथ अन्याय भी न हो तथा पुलिस की छवि में भी सुधार हो सके।

बल अर्थात रौब एवं दंभ (Authority)

पुलिस संस्था प्रशासन को जनता के साथ जोड़ने वाली अटूट कड़ी है। तद्र्थ पुलिस बल को अधिकारिक तौर से अनंत शक्तियां मिलती है, जिनका प्रयोग अपनी ज़मीर की आवाज सुनकर करना चाहिए। लेकिन पुलिस कर्मी भी है तो आम मनुष्य ही। वह मानव सुलभ विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अंहकार) से ग्रस्त होता है। (Power corrupts a man and absolute power corrupts absolutely) अतः अपनी Power की आड़ में उसकी authority अर्थात् (रौब) का अनाधिकार, misconduct में परिणत हो जाता है। कुछ वर्दीधारियों के हाथ का डंडा, दंड लठ, लगुड़ अनावश्यक रूप से दंभ, आतंक एवं वृथाभिमान का पर्याय बन जाता है। उदाहरणतया सामने से गुजरने वाले पैदल अथवा वाहन सवार को ट्रैफिक पुलिस को दुआ-सलाम करना ही चाहिए, और तो और सिपाही को एक बार 'हवलदार साहिब' बोल कर तो देखें, कैसे वह फूल कर कुप्पा हो जाता है तथा चुटकियों में ही आप का काम करवा देता है। इसी तरह प्राईवेट बसों में भी मुफ्त सफर करना अपना जन्मजात अधिकार समझता है। सिनेमाघरों में बिना टिकट फिल्म देखना, रेहड़ी वाले अथवा दुकानदार से मुफ्त अथवा सस्ती चीजें लेना उसके लिए कोई मुश्किल बात नहीं। यही नहीं पुलिस स्टेशन में एफ.आई.आर लिखने में आना-कानी करना, अथवा, अनुचित धारा का प्रयोग कर देना जैसाकि 107/150 की बजाय 107/151 लगा कर, मुकदमें की प्रकृति बदल देना, पीड़ित को थाने में अनावश्यक रूप से बुलाना, गाली गलौच की भाषा में बात करना, स्त्री, बच्चे, बुजुर्गों तक का लिहाज न करना, पीड़ितों से वाहन की मांग करना, सम्मन तामील करते समय भी पैसा ऐंठने की फिराक में रहना, चरित्र सत्यापन, दुर्घटना, पोस्टमार्टम आदि में पैसा ऐंठने की इच्छा रखता है। कैदियों के मानवीय अधिकारों को ताक पर रख देता है तथा स्त्रियों से बलात्कार या शिशुओं को यातना कोई बड़ी बात नहीं। इस वृथाभिमान के कारण ही पुलिस और जनता के संबंध सुखद नहीं होते और तो और पुलिस विभाग के अंदर सीनियर-जूनियर का बहुत प्रचलन रहता है अथवा जब किसी को जनमहत्व (Public handling) का पद मिलता है अथवा किसी वी.आई.पी. का अंगरक्षक बन जाता है, तो वह अपने ही रैंक के दूसरे सहकर्मी से अपने को ज्यादा

गुणवान, चतुर, कर्तव्यनिष्ठ होने की गलतफहमी का शिकार हो दंभ-आडम्बर का घिनौना प्रदर्शन करने से बाज नहीं आता। कुछ पुलिस प्रभारी स्वयं तो दंभी-झक्की हुए ही हुए, परंतु उनके घमंडी परिजन उन से भी दो हाथ आगे रहते हैं। उनके लटके-झटकों का तो क्या ही कहना? राजनेता, अपराधी और पुलिस के गठजोड़ की आधुनिक भौतिकवादी तस्वीर ने तो वर्जनाओं की सभी सीमाओं को लांघ लिया है। अपराधियों के तीन चेहरे हैं। एक जो अपराध का धंधा करता है, दूसरा जो अपराध को संरक्षण देता है और सता के भीतर बैठा है, तीसरा जो खाकी वर्दी में अपराध से सांठ-गांठ करके दूसरी समस्त शक्तियों को हाशिए में डालने में लगा है। यह एक टीम हैं। हर जगह, हर तरह से सावधान है और जिसे हम शक्ति मानते हैं, वैसे हर शक्ति से लैस है। पुलिस विभाग में एनकांउटर स्पेशलिस्ट कह कर जिन्हें विशेष रूतबा दिया जाता था, वो कब मर्डर स्पेशलिस्ट बन गए, कोई भांप तक नहीं पाया। विशिष्ट वर्दीधारी कब पुलिस मैन्युअल की धाराओं की धज्जियां उड़ाने में पीछे नहीं रहते। हरियाणा के पुलिस प्रमुख एक पूर्व बुनियादी तौर पर ताकतवर और अतिविशिष्ट जमात के नुमाइंदे के केस में कानून और न्याय को आंखें मूंदने पर सालोंसाल विवश किया जाता रहा है। कब पीड़ित को न्याय मिलेगा? पुलिस उल्लंघनाओं के ये मुंह बोलते प्रश्न है, जिनका एक ही उत्तर है कि पुलिस अधिकारी अपने पद से ही सुशोभित नहीं होते अपितु उनका पद उनके व्यक्तिगत, सदगुण जमीर की ऊर्जा तरंगों से सुशोभित होता है। बेडौल शरीर, बड़ी-बड़ी बेढंगी मूछें, कर्म से भी भ्रष्ट, गलत लोगों के हाथों चढ़ने वाला, अपनी जमीर के अंतर्मन कचोकों को तो सहता, सालता ही है साथ ही साथ वह अपने विभाग की मान मर्यादा को भी कलंकित करता है। एक पुलिस कर्मी की गलती समस्त विभाग की छवि को कुंद कर देती है। ऐसे में उसे लोग बुरा ही कहेंगे। अतः पुलिस की धूमिल छवि को सुधारने का 'Policing The Police Spiritually' ही एक मात्र समाधान है।

पुलिस की पुलिसिंग (Policing of Police)

समाज में उच्चकोटि का आदर्श एवं अच्छी छवि बनाए रखने के लिए उत्तम अनुशासन, कुशल नेतृत्व, कर्तव्यनिष्ठा एवं नैतिक बल (ज़मीर) की परम आवश्यता है। आदिकाल से ही से ही देवासुरों का संग्राम चलता रहा है। आज भी समाज में उत्तम, मध्यम तथा अधम किस्म के व्यक्ति होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति में अच्छे और बुरे गुणों का समावेश होता है। जिनमें अच्छाईयां ज्यादा होती हैं, वे ज्यादा कर्तव्यपरायण सात्विक होते हैं। उनकी आत्मा व ज़मीर जागृत होती है। इसलिए वर्दीधारी का असली बल वर्दी की जागृत ज़मीर जो व्यक्ति के चहुंमुखी व्यक्तित्व को चार चांद लगाती है। कीचड़ में ही कमल का फूल खिलता है। वर्जनाओं पर दृष्टिपात करें तो पुलिस विभाग कहीं-कहीं कानून तोड़ने वाला वर्दीधारी वर्ग प्रतीत हो सकता है तथापि यह पुलिस बल है तो जन कल्याण व रक्षा के लिए ही। पुलिस कर्मचारी भी कानून की प्रताड़ना से बच नहीं सकता। वह भी कानून के प्रति जवाब देह है। पुलिस कर्मचारी को Internal Mechanism व External Mechanism दोनों प्रकार की प्रकियाओं से गुजरना पड़ता है। उसके विरुद्ध शिकायत मिलने पर उसे पुलिस विभाग की आन्तरिक मैकानिज्म का सामना करना पड़ता है जैसे कि वार्निंग, सैनश्योर, विभागीय जांच, निलंबन, सेवामुक्ति आदि क्रियाओं से गुजरना होता है। Audit System Press एवं जनता भी उस पर पैनी नजर रखे होती है इसलिए किसी भी कर्तव्य में कोताही होने पर अधिकांश उसे बक्शा नहीं जा सकता अपितु सार्वजनिक रूप से उसकी बखियां उधेड़ने की पूरी संभावना होती है ताकि रक्षक भक्षक बनने से गुरेज करें, भगवान से डरें तथा अपना पूरा ध्यान ईमानदारी से जनरक्षा पर लगाएं।

साईबर अपराध बनाम पुलिस

पुलिस वर्ग अच्छे काम भी करता है तथा बदलते हुए संदर्भ में अपनी कर्तव्यपरायणता को तदनुसार ढालने में भी सक्षम है। उदाहरणतः विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उन्नत समाज के साथ अपराध जगत का भी आधुनिकीकरण हो रहा है। अपने नेट-वर्किंग, मोबिलिटी और हाई कनेक्शन के जरिए साईबर अपराध बड़े आराम से किए जा रहे हैं। मुम्बई पुलिस ने दिसम्बर 2000 में एक साईबर क्राईम सैल बना कर हाईटैक अपराधियों से मुकाबला शुरू करने की पहल की तथा हाईटैक साईबर लैब की शुरूआत की। साईबर स्पेस में अपराध के आधुनिक तौर तरीकों पर नजर रखना, उसमें इस्तेमाल होने वाली तकनीक की पहचान करना तभी इस विषय में एक संदर्भ केंद्र के रूप में काम करना इस की प्रयोगशाला की विशेषताएं है। इस तरह पुलिस पुरूषार्थी बन अपनी ओजम् एवं तेजस शक्तियों का प्रयोग हाईटैक अपराधियों की खोज करने में कर रही है।

महिला पुलिस

पुलिस प्रशासन समाज की कानून व्यवस्था संभालने वाला एक प्रमुख अंग है। अब इस मारपीट वाले पुरुषोचित पुलिस व्यवसाय में महिलाओं ने भी अपनी दस्तक दे दी है। सुकोमल, मृदुलाडी, सदाचारी एवं संवेदनशील नारी चाहे अधिकारी हो या अधीनस्थ अपने नारी सुलभ, सुलझे हुए मानवीय सद्‌गुणों से अपने पुलिस विभाग की फालतू की धूल झाड़ने में सक्षम है। क्योंकि वह भावुक रूप से स्थिरप्रज्ञ होती है। गंभीर, दत्त, कर्तव्यनिष्ठ समर्पित नारी एक ऐजेंट बन कर जनता और पुलिस के बीच की खाई को पाटने मे समर्थ है। अपने नेतृत्व के बल पर पुलिस के पक्ष को दृढ़ता से रख सकती है। यद्यपि अधिकांशतः अभी तक नारी को सामाजिक कल्याण के विषयक केसों में विषयों तक ही सीमित रखा है तथापि वह अधीरतावश आसानी से बल, सख्त बल, अस्त्र-शस्त्र का अंधाधुंध प्रयोग नहीं करती। यद्यपि विभाग में भी पुरुष सहकर्मियों के लिंग विषयक पूर्वाग्रहों को उसे सहना पड़ता है तथापि महत्वकांक्षी नारी अत्याधुनिक हथियारों से लैस अपराधियों के ठिकानों पर छापा मारना, हिसंक भीड़ नियंत्रण, दंगे, गैंगस्टर, रात्रिगश्त, आंदोलन जैसे चुनौतिपूर्ण मामलों में शारीरिक रूप से बलिष्ठ बन, अत्याधुनिक ढंग से प्रशिक्षित हो, प्रज्ञावान बन, साम-दाम-दंड-वेद जैसे दाब अपना कर पुलिस विभाग के लिए सही Asset/input बन, अपने पुरुष सहकर्मियों से कंधे से कंधा मिला कर जागृत सूर्य की रोशनी बन नवयुग के अरुणोदय के नवउत्थान में अपनी ज़मीर के अनुसार कर्तव्य निर्वाहन कर महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

पुलिस ज़मीर बनाम सूचना क्रांति :

वर्तमान समय में वर्दी का असली बल वर्दीधारी की ज़मीर गंभीरता से पुलिस बल को अपनी कार्यशैली में लाना ही होगा क्योंकि 'सूचना के अधिकार' कानून द्वारा कोई भी व्यक्ति पुलिस से हिरासत में रखे हुए व्यक्ति की प्राथमिकी रिर्पोट, अंतिम रिर्पोट, थाने की सुविधाएं, कार्यों का बंटवारा, पुलिस के संसाधन, अपराधों की सामान्य जानकारी आदि मांग सकते हैं, कभी महसूस करें, तो शिकायत कर सकते हैं, सरकार से आज्ञा लेकर पुलिस पर अभियोग भी चला सकते हैं। इसलिए अब पुलिस को परंपरागत अपसंस्कृति अर्थात् शासक बन जनता से व्यवहार करने की प्रवृत्ति त्यागनी होगी। पुलिस पेशे में पारदर्शिता-सच्चाई बरकरार रखनी होगी। ज़मीर को जागृत रखना ही होगा। यही नहीं अब भारत में भी बायोमीटिक्स की बयार बढ़ने लगी है। आंध्रप्रदेश के तिरुपति मंदिर की सुरक्षा इसका शोभन उदाहरण है। बायोमिटिक्स संयंत्र अर्थात किसी भी व्यक्ति के भौतिक लक्षण-प्रिंट, हाथ की ज्यामिति, आंख की संरचना द्वारा

हर व्यक्ति हर समय हर जगह निगरानी में रहता है। यह तंत्र प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षा तो देगा ही साथ ही साथ आप की निजी जिंदगी की पोल भी खोल देगा। अतः पुलिस को अपनी व्यक्तिगत अथवा व्यावसायिक जिंदगी की निजता को जमीर के दायरे में बांधना होगा। कानून के रखवाले वर्दीधारी प्रहरी उसे पहले वे मानव हैं, शहरी हैं, नागरिक हैं, आम जनता से मिलकर उसे चलना होगा। सहकार-समन्वय सहयोग से अपने सभी विभागीय कार्य करने होंगे। इस सहयोग रूपी सेतु द्वारा जनता व पुलिस को आपसी तालमेल बढ़ाना होगा, ताकि लोग पुलिस, मजबूरियों, खूबियों एवं कमियों को सहानुभूति से समझ सके। कम्युनिटी पोलिसिंग से जनता की पुलिस कार्य में भागेदारी बढ़ेगी। असामाजिक तत्व की सूचना पुलिस को आनन-फानन मिलेगी। मुखविर बन तत्काल पुलिस कार्रवाई में जनता सहयोगी होगी। समाज में अपराधों की रोकथाम होगी। Community Crime, Situational Crime कम होंगे। पुलिस कम्युनिटी के सदस्य मिलकर टीम के रूप में कार्य करेंगे वे समस्याओं पर विचार करेंगे, तत्कालिक समाधान ढूंढेंगे, Decision making में जनता पुलिस की सहायता करेगी। कम्युनिटी सदस्य पीड़ित और पुलिस के बीच बिचोलिए का काम कर सामाजिक कुरीतियों आदि से समाज को निजात दे सकेंगे। पुलिस नेतृत्व में भी पहल करने की प्रवृति को बल मिलेगा। वह अपनी (कल्पना) एवम् discretion Motivation को सकारात्मक रूख देकर व्यावसायिक रूप से संतुष्ट होंगे। उस अधिकारी के अपने अधीनस्थ भी supportive होंगे, जनता तो होगी ही। ऐसे परस्पर सहकार वाली संस्कृति में अधिकांश वातावरण crime free होगा। यह कार्य कोई फूलों की सेज नहीं है। पुलिस कार्य क्षेत्र तो तलवार की दोमुही धार है। हर कदम चौकन्ना, सावधान, सतर्क, संशय शून्य, सचेत हो उठाना होगा। जागृत ज़मीर वाला पुलिस कर्मी ही हर चुनौती का सामना कर लेता है।

निष्कर्ष

अनुशासन, सेवा, समर्पण, सत्यता एवं निष्ठा की धुरी पर खड़ा शस्त्र-शास्त्र में निष्णात समाज की रक्षा पंक्ति स्वरूप यह पुलिस वर्ग जब अपनी दैनन्दिनी जीवनचर्या को ज़मीर के प्रकाश से सवांर-बुहार लेगा तो अहमता, ममता, निराशा, तनाव के बंधन ढीले पड़ेंगे और जिस अनुपात में बंधन ढीले होंगे, उसी अनुपात में वह समाज को जागृत, सुरक्षित रखने में तत्पर होगा। "वयं राष्ट्रे जागृयामः' वैदिक मंत्र का यह शोभन उद्घोष सैनिकों की ओर से युग की सुरक्षा का आश्वासन देगा। यह कौशल मनस्वी शुरवीर, कर्मसु कौशलम्, कर्मों में दक्षता लाने वाला ही कर सकता है। तदर्थ सबल सिपाही में पर्याप्त शारीरिक बल, मानसिक सचेतनता, बौद्धिक प्रखरता एवं आध्यात्मिक संवेदनशीलता अनिवार्य पूंजी होनी चाहिए तभी भी वे राष्ट्र पुनरुत्थान में अपनी सांझेदारी डाल सकता है। संघात्मक हथियार तो फौलाद से गढ़े जा सकते हैं। लकड़ी के टुकड़ों से तो केवल बच्चों को बहलाने वाली तलवारें ही बनाई जा सकती हैं। जिनका खेल प्रदर्शन तो संभव है पर यथार्थ में उनसे कुछ सृजनात्मक मूर्त काम नहीं किया जा सकता है। ज़मीर के अनुशासन रूपी चाबुक से अपनी प्रतिभा, सामर्थय, क्षमता, चरित्र-चित्रण को इस तरह गढ़ना और निखारना है जिस से राष्ट्रीय एवं वैश्विक चुनौतियों का सुरक्षात्मक कारगर हल ढूंढा जा सके। इस कार्य से "न दैन्यम् न पलायनम्' वाला महामंत्र अपनाना होगा।

स्वस्थ शरीर, स्वच्छ मन और सबल ज़मीर वाला पुलिस व्यक्तित्व नवयुग की सुरक्षा के लिए जब तीन आधारों पर खड़ा होगा, तो Charity begins at home सार्थक होकर ही रहेगा। जब सभी पुलिस कर्मी सुधरेंगे, तो युग स्वतः ही सुरक्षित होगा। शुरूआत, आज, और अभी अपने आप से ही करनी होगी। व्यक्ति से ही परिवार सुधरेगा जो प्रजातंत्र की छोटी इकाई है, परिवार

से समाज, समाज से राष्ट्र, राष्ट्र से विश्व, विश्व से युग की मानसिकता रचनात्मक रूप लेगी। नीर-क्षीर-विवेक न्याय के नए द्वार खुलेंगे, तभी सुरक्षा के नए आयाम जुड़ेंगे। उज्जवल जीवन की नई संकल्पना के सर्वथा पुरातन एवम् नूतन बीजों से नए ढंग से पुनः अंकुरित होना शुरू कर दिया है। इस सशक्त रणनीति द्वारा भयावह विकट वर्तमान की कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य के साथ जब पुलिस कर्मी अपनी कर्मस्थली में अध्यात्म के मूल मर्म (ज़मीर) को प्रस्तुत करने उतरेगा तो अनीति पर अकुंश ही नहीं लगेगा अपितु त्राण मिलेगा तथा समूल अनीति को उखाड़ दिया जाएगा। कानूनों का क्रियान्वयन कोरी लीपापोती ही न रहकर लोक शिक्षण में व्यावहारिक रूप से कारगर सिद्ध होगी। वास्तव में हमारा देश देवभूमि रहा है। जब-जब संसार में नैतिक पतन हुआ है तब-तब अध्यात्मिक पुर्नजागरण के लिए ईश्वर ने भी भारत को ही अपना कार्यक्षेत्र चुना है। ज़मीर पर **कर्मण्येवाधिकारस्ते** का संदेश मानव को भावविह्ल करते हैं, प्रेरणा स्फूर्त होते हैं। जब अपनी चेतना ज़मीर को इतना परिष्कृत एवं विस्तृत कर लिया जाता है, तो वसुधैव कुटुम्बकम हुआ दिखता है।

अर्थात देवता लोग चरवाहों की तरह डंडा लेकर पहरा नहीं देते। वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं, उसे उत्तम बुद्धि (जागृत ज़मीर) से मुक्त कर देते हैं। अतः अगर कोई जरूरत है तो वह यह है कि पुलिस बल की ज़मीर को बज्रांग, बज्रअंग, बजरंग, हनुमान की तरह जब उनकी समस्त शक्ति की जागृति का आभास कराया जाता है, जगाया जाता है, संचालित किया जाता है, संक्रिय किया जाता है एवं संगठित कर सृजनात्मक सुरक्षा के महान लक्ष्य से नियोजित किया जाता है तो कठिनतम लक्ष्य भी भेदन हुए बिना नहीं रह सकता तथा नव-निर्माण होकर ही रहता है।

❑

लेखकों से निवेदन

यदि पुलिस विज्ञान में प्रकाशन के लिए आपके पास पुलिस, शांति-व्यवस्था, अपराध न्याय-व्यवस्था आदि पर कोई लेख है या आप लेख लिखने में सक्षम हैं तथा रुचि रखते हों तो अपने लेख यथा शीघ्र भेजें। अच्छे लेखों को प्रकाशित करने का हमारा पूरा प्रयास रहेगा। लेख टाइप किया होना चाहिए तथा इसके संबंध में फोटो, चार्ट आदि हों तो उन्हें भी साथ भेजना चाहिए। प्रकाशित होने वाले लेखों पर समुचित पारिश्रमिक की व्यवस्था है।

यदि आपने पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी विषय पर उपयोगी पुस्तक लिखी है और आप पुलिस विज्ञान में उसे कड़ी के रूप में प्रकाशित करवाना चाहते हैं तो हमें पांडुलिपि भेजें।

यदि आप कर्मियों के कार्य को लेकर कहानी या अन्य किसी विधा में लिखने में रुचि रखते हों तो हम ऐसे साहित्य का भी स्वागत करेंगे।

यदि पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी हिन्दीतर भाषा के उच्चस्तरीय लेख का अनुवाद किया हो और आपके पास अनुवाद प्रकाशन का कापीराइट हो अथवा उनके कापीराइट की आवश्यकता न हो तो ऐसे लेख/सामग्री भी प्रकाशनार्थ आमंत्रित हैं। प्रकाशित लेखों पर समुचित मानदेय देने की व्यवस्था है। लेख भेजते समय यह प्रमाणित करें कि लेख मौलिक/अनूदित व अप्रकाशित है तथा इस पर कोई मानदेय नहीं लिया गया है। अनूदित लेख के कापीराइट के संबंध में भी सूचित करें।

विषय आदि के बारे में विस्तृत जानकारी के लिए पुलिस विज्ञान की नमूने की प्रति मंगाने के लिए संपर्क करें :--

पुलिस विज्ञान
पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, चौथी मंजिल
सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003
फोन : 24360371 एक्स. 253

वैब साइट — डब्लू डब्लू डब्लू.बीपीआरडी.जीओवी.इन
डब्लू डब्लू डब्लू. बीपीआरडी.एनआईसी.इन

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय
पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना

पुलिस, कारागार एवं न्यायालयिक विज्ञान से संबंधित विषयों पर हिन्दी में पुस्तक लेखन के लिए रचनाएं आमंत्रित की जाती हैं। मूल प्रकाशित पुस्तकों पर 5 पुरस्कार 30,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है), दो पुरस्कार अनूदित मुद्रित पुस्तकों के लिए 14,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है)। योजना के भाग दो में 40,000/- रु. के दो पुरस्कार हैं। जिसके लिए निर्धारित विषयों पर रूपरेखाएं आमंत्रित की जाती हैं। जिसमें सामान्य वर्ग के लिए **दिए गए विषय पर आवेदक उस विषय पर लिखने वाली पुस्तक में क्या-क्या सामग्री व अध्यायों आदि का उल्लेख करते हुए 5-6 पृष्ठ की एक रूपरेखा को प्रस्तुत करना होगा** तथा महिलाओं के लिए आरक्षित विषय में भी उपरोक्त प्रक्रिया अपनाई जाएगी। रचनाएं/रूपरेखाएं भेजने की अंतिम तिथि सामान्यतः 30 सितंबर होती है। विस्तृत जानकारी के लिए कृपया संपादक (हिंदी), पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (गृह मंत्रालय), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सी.जी.ओ. कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क करें।

(दूरभाष : 011-24362418, 24360371 एक्स-253 तथा फैक्स : 011-24362425)

अपराध विज्ञान तथा पुलिस विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु अध्येतावृति योजना

पुलिस विज्ञान तथा अपराध विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु ब्यूरो द्वारा 6 अध्येतावृतियों के लिए भारतीय नागरिकों से आवेदन पत्र आमंत्रित किए जाते हैं। इस योजना के तहत विज्ञापन प्रति वर्ष मई माह में भारत के सभी प्रमुख समाचार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जाता है। इसके लिए अंतिम तिथि 30 जून होती है। इसमें अभ्यर्थी को पी.एच-डी. के लिए विश्वविद्यालय से पंजीकृत होना आवश्यक है। इसमें अभ्यर्थी को पहले 2 वर्ष 8000/- रु. तथा तीसरे वर्ष 9000/- रु. तथा इसके साथ फुटकर खर्च के लिए 10000/- रु. तथा जिस संस्था से वह पंजीकृत होगा उसे 3000/- रु. प्रदान किए जाएंगे। विस्तृत जानकारी के लिए अनुसंधान एकक, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क किया जा सकता है। पूर्ण जानकारी कार्यालय की वेब साइट www.bprd.gov.in में भी देखी जा सकती है। (संपर्क के लिए फोन नं. 01124360371/243)

पुलिस एवं कारागार संबंधी विषयों पर अनुसंधान परियोजनाएं आमंत्रित

पु.अनु.वि. ब्यूरो (गृह मंत्रालय) **पुलिस एवं कारागार** से संबंधित विभिन्न विषयों पर अनुसंधान परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए गैर सरकारी संगठनों, विश्वविद्यालयों व व्यक्तिगत शोधकर्ताओं को उनके संबंधित विश्वविद्यालयों के माध्यम से आवेदन आमंत्रित कर रहा है। आवेदन भेजने की अंतिम तिथि 30 सितंबर होती है। विस्तृत जानकारी के लिए उपनिदेशक (अनु.) एवं सहायक निदेशक (सी.सी.), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 (फोन नं. 01124362418 एवं 01124263872) पर संपर्क कर सकते हैं। तथा ब्यूरो की www.bprd.gov.in वेब साइट से भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना के अंतर्गत ब्यूरो द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

क्र. सं.	*पुस्तक का नाम*	*लेखक का नाम*	*मूल्य*
1.	**भारतीय पुलिस का इतिहास** (अतीत काल से मुगल काल तक)	डा. शैलेन्द्र चतुर्वेदी	54/-
2.	**भारत में केन्द्रीय पुलिस संगठन**	श्री एच. भीष्मपाल	65/-
3.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री रामलाल विवेक	65/-
4.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री शंकर सरौलिया	70/-
5.	**विकासशील समाज में समसामयिक पुलिस की भूमिका**	श्री आर.एस. श्रीवास्तव	105/-
6.	**स्वातंत्र्योत्तर भारत में पुलिस की भूमिका एवं जनता का दायित्व**	डा. कृष्णमोहन माथुर	210/-
7.	**मादक पदार्थ एवं पुलिस की भूमिका**	श्री हरीश नवल	—
8.	**सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में पुलिस की भूमिका का उद्‌भव**	प्रो. मीनाक्षी स्वामी	—
9.	**समग्र न्याय-व्यवस्था में पुलिस का स्थान एवं भूमिका**	श्री ललितेश्वर	600/-
10.	**पुलिस दायित्व एवं नागरिक जागरूकता**	डा. सी. अशोकवर्धन	568/-
11.	**महिला और पुलिस**	श्रीमती अमिता जोशी	100/-
12.	**मानवाधिकार और पुलिस**	डा. जी.एस. वाजपेयी	346/-
13.	**नई आर्थिक नीति एवं अपराध**	डा. अर्चना त्रिपाठी	183/-
14.	**बाल अपराध**	डा. गिरिश्वर मिश्र	225/-
15.	**न्यायालयिक विज्ञान की नई चुनौतियां**	डा. शरद सिंह	200/-
16.	**मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस**	श्री रामकृष्ण दत्त शर्मा एवं डा. सविता शर्मा	510/-
17.	**सामुदायिक पुलिस व्यवस्था**	डा. तपन चक्रवर्ती डा. रवि अम्बष्ट	205/-
18.	**संगठित अपराध**	श्री महेन्द्र सिंह आदिल	313/-
19.	**पुलिस कार्यों का निजीकरण**	डा. शंकर सरौलिया	330/-
20.	**साइबर क्राइम**	डा. अनुपम शर्मा	450/-
21.	**अपराधों की रोकथाम और प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल**	डा. निशांत सिंह	545/-
22.	**अपराध पीड़ित महिलाओं की समस्याएं**	डा. उपनीत लाली डा. ऋता तिवारी	775/-

ब्यूरो द्वारा प्रकाशित उपरोक्त सभी पुस्तकें, नियंत्रक, प्रकाशन विभाग, सिविल लाइंस, दिल्ली-110054 से प्राप्त की जा सकती हैं।